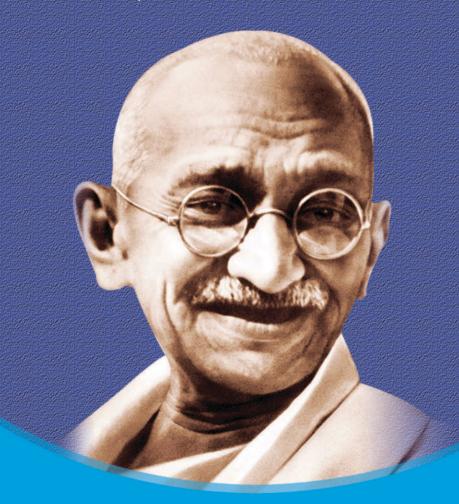




ग्रामीण विकास समीक्षा महात्मा गाँधी विशेषांक





राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान राजेन्द्रनगर, हैदराबाद - 500030 ग्रामीण विकास समीक्षा राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान, हैदराबाद - 30 (तेलंगाना) द्वारा प्रकाशित एक अर्ध वार्षिक पत्रिका है ।

पत्रिका का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास में अध्ययन और अनुसंधान को बढ़ावा देना है। यह सामाजिक विज्ञान और ग्रामीण के बीच एक सुदृढ संयोजन स्थापित करता है तथा ग्रामीण विकास से जुड़े नीति निर्माताओं, कार्यपालकों तथा विभिन्न समाज विज्ञान आयामों के बीच विचार विनिमय का एक मंच उपलब्ध कराता है।

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने विचार है और इनके लिए राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान (हैदराबाद) किसी भी प्रकार जिम्मेदार अथवा उत्तरदायी नहीं है ।

संपादकीय मंडल

अध्यक्ष

डॉ. डब्ल्यु. आर. रेड्डी

महानिदेशक

उपाध्यक्ष

श्रीमती राधिका रस्तोगी

उप महानिदेशक

सदस्य **डॉ. आकॉक्षा शुक्ला**

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष (सीडीसी)

सदस्य

डॉ. आर. एम. पंत

निदेशक, एनईआरसी, गुवाहाटी

मटस्य

डॉ. सी. एस. सिंघल

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष (सीपीजीएस) (सेवानिवृत्त)

सदस्य

श्रीमती अनिता पांडे

सहायक निदेशक (रा.भा.)

सहायक संपादक

श्री ई. रमेश

वरिष्ठ हिन्दी अनवादक(रा.भा.)

ग्रामीण विकास समीक्षा सहयोगी लेखकों के लिए

प्रकाशन की निरंतरता को बनाये रखने के लिए लेखकों से अनुरोध है कि ग्रामीण विकास हेतु विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित मौलिक, अनुसंधानात्मक तथा विश्लेषणात्मक लेख मूल रूप से हिन्दी में ही लिखे तथा हमें यथाशीघ्र प्रेषित करने की कृपा करें तािक इस ज्ञान गांगा को जन साधारण तक ले जाया जा सके । फलत: ऐसे लेखों की भाषा सरल एवम् बोधगम्य हो तथा आंकडो व सारणियों का कम से कम प्रयोग हो । लेख टंकित होना चाहिए । हस्तलिखित लेख स्वीकार नहीं किये जायेंगे । इस संबंध में यदि किसी सहायता की आवश्यकता हो तो संपादक से संपर्क करें ।

ग्रामीण विकास समीक्षा महात्मा गाँधी विशेषांक



राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान

राजेन्द्रनगर, हैदराबाद - 500 030. (भारत)

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृ. सं.
1.	ग्रामीण विकास में गांधी दर्शन की प्रासंगिकता	01
	• राजीव मोहन पंत	
2.	राजभाषा हिन्दी के प्रबल समर्थक – महात्मा गांधी	09
	• राकेश शर्मा 'निशीथ'	
3.	महात्मा गांधी और ग्रामीण विकास	34
	• डॉ. बृजमोहन	
	• डॉ. विजय कुमार	
	• डॉ. अनुपम कृष्ण दीक्षित	
4.	ग्राम नवरचना और विकास के लिए गाँधी विचार	37
	प्रेरित विकासपथ	
	• डॉ. मयुरी फार्मर	
5.	महात्मा गांधी और हिन्दी	46
	• डॉ. बृजमोहन	
	• डॉ. विजय कुमार	
•	 डॉ. अनुपम कृष्ण दीक्षित 	
6	महात्मा गांधी के दृष्टिकोण में ग्रामीण जीवन शैली,	49
	ग्रामीण अर्थव्यवस्था और ग्रामीण चिकित्सा प्रबंधन	
	• आरसी प्रसाद झा	
7.	गाँधी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त से प्रेरित भूदान एवं	73
	ग्रामदान आन्दोलन और ग्रामीण विकास	
	• डॉ. जनक सिंह मीना बद्रीनारायण जाट	

क्र.सं.	विषय	पृ. सं.
8.	गाँधी जी के सपनों का गाँव	87
	• एन.वी.एन. गोपाला कृषणा राव	
9.	बदलता ग्रामीण सामाजिक - आर्थिक परिदृश्य एवं महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता	90
	वर्तमान के सन्दर्भ में	
	• डॉ. जीतेन्द्र कुमार डेहरिया	
10.	महात्मा गाँधी और हिन्दी	100
	• डॉ. अनुज कुमार सिंह सिकरवार	
11.	महात्मा गांधी और सहकारिता	105
	• डॉ. बृजमोहन	
	• डॉ. अनुपम कृष्ण दीक्षित	
12.	गाँधी और हिन्दी	108
	• शेषांक चौधरी	
13.	महात्मा गाँधी और हिन्दी	113
	• राकेश शुक्ला	

1. ग्रामीण विकास में गांधी दर्शन की प्रासंगिकता

"Two roads diverged in a wood, and I—I took the one less traveled by, And that has made all the difference."

... Robert Frost

* डॉ. राजीव मोहन पंत

मोहन दास करमचंद गांधी ने कुछ ऐसी ही, "less traveled by" की राह चुनी, ऐसे समय जब हिंसक साम्राज्यवाद अपनी चरम सीमा पर था, भौतिकता की होड़ में मानवता दब रही थी, ऐसे में गांधी जी ने एक नई राह दिखाई, अहिंसा की, त्याग की, सर्वोदय यानी 'सबके उदय की'। अहिंसा के द्वारा शोषण से लड़ाई, अपने अधिकार के लिए 'सत्याग्रह' एवं आर्थिक विकास के प्रति विस्तृत सोच' गांधी को इतिहास में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करती है। भारत की ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता एक नई सोच का सफल उदाहरण है, जिसने पूरे विश्व को एक नई अवधारणा दी। गांधी के दर्शन पर चलने वाले अनेक व्यक्तित्व जैसे मार्टिन लूथर किंग, नेल्सन मंडेला एवं दलाई लामा प्रसिद्ध 'नोबेल शान्ति'पुरस्कार से सम्मानित हुए।

गांधी के सपनों का भारत- गांधी जी के अनुसार, 'भारत सात लाख पचास हजार गांवों में बसता है। यदि गांवों का ह्रास होगा तो देश का भी ह्रास होगा।देश का विकास ग्रामीण विकास से ही सम्भव है।'

गांधी के विचार में ग्रामीणजनों का विकास तभी संभव होगा, जब आर्थिक विकास के कार्यक्रम ग्राम्य केंद्रित बनेंगे। आत्मनिर्भरता, आपसी सहयोग एवं ग्रामीण उद्योगों का विकास ही 'ग्राम स्वराज' एवं

रामराज्यकी परिकल्पना को साकार करेगा, ऐसा गांधी का मानना था। गांधी जी ने 18 सूत्रीय, ग्रामीण पुनर्निर्माण कार्यक्रम दिया, जिसे उन्होंने सेवा ग्राम (1935) केंन्द्र, वर्धा में सफलतापूर्वक कार्यान्वित कर एक उदाहरण प्रस्तुत किया। गांधी के सपनों का गांव एक पूर्ण गणतंत्र था जिसमें अपनी आवश्यकताओं के प्रति पूर्ण आत्मनिर्भरता होगी। हर ग्रामवासी अपनी मूल आवश्यकताओं जैसें भोजन एवं वस्त्र आदि को पूर्ण करने में सक्षम होगा। गांधी की कल्पना के गांव में जानवरों के लिए चारागाह, युवाओं के लिए खेल का मैदान 'नकदी फसलों' के लिए उपलब्ध जमीन आदि का प्रावधान था, विद्यालय, थियेटर, मीटिंग हॉल, स्वच्छ जल की आपूर्ति आदि भी गांधी के गांव की परिकल्पना में समावेशित है।

गांधी जी की ग्राम पुनर्निर्माण योजनाग्राम स्वराज एवं स्वदेशी के सिद्धान्तों पर आधारित थी। ट्रस्टीशिप, स्वदेशी, पूर्णरोजगार, रोटी मजदूरी, आत्मनिर्भरता, विकेन्द्रीकरण, समानता एवं नई तालीम, गांधी के ग्राम पुनर्निर्माण के प्रमुख स्तम्भ थे।

(1) ट्रस्टीशिप गांधी के अनुसार"जीवन की राह" है न कि किसी भौतिक लक्ष्य प्राप्ति का साधन।गांधी के अनुसार,'प्राकृतिक सम्पदायें ईश्वर की भेंटे है व इन पर सभी का बराबर का अधिकार है। यदि किसी व्यक्ति के पास यह ईश्वर की भेंट अधिक मात्रा में हो, तो वहा इस सम्पदा का "ट्रस्टी"है और यह सम्पदा सामुदायिक कल्याण के लिए उपयोग होनी चाहिये। भू-स्वामियों का अहिंसा द्वारा हृदय परिवर्तन होना चाहिए।

स्वदेशी गांधी जी का एक स्पप्न था, सभी को विकास प्रक्रिया में सम्मिलित कर गांवों में उपलब्ध संसाधनों का उपयोग कर ग्राम्यजन आर्थिक सम्पन्नता एवं आत्मिनिर्भरता पाकर पूंजीपितयों के शोषण से मुक्त हो सकते है।

आत्मनिर्भरता के सिद्धान्त पर गांधी का मानना था कि शोषण के विरूद्ध आत्मनिर्भरता एक प्रमुख हथियार है, जिसका शोषण एवं हिंसा के विरूद्ध उपयोग किया जा सकता है। ग्राम्यजनों को अपने भोजन वस्त्र एवं अन्य दैनिक आवश्यकताओं की आपूर्ति उपलब्ध संसाधनों से पूरी कर आत्मनिर्भर बनना होगा। सहयोग द्वारा ही ग्रामीण समाज अहिंसा एवं आत्मनिर्भरता के लक्ष्यों को पूर्ण कर सकेगा।

रोटी मजदूरी के अवधारणा रास्किन एवं टालस्टाय के विचारों से प्रेरित है, गांधी के अनुसार यदि कोई व्यक्ति अपनी भोजन की आपूर्ति के बाराबर शारीरिक श्रम नहीं कर सकता उसे रोटी खाने का अधिकार नहीं है।

ग्राम स्वराज की परिकल्पना गांधी ने व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय स्तर के परिप्रेक्ष्य में की है। हर व्यक्ति की प्राथमिक आश्यकताओं की आपूर्ति से गांव आत्मनिर्भर बनेंगे। हर व्यक्ति चर्खे से स्वयं के लिए वस्त्र बुने व कृषि के माध्यम से खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बने, ऐसा गांव ''सादा जीवन-उच्च विचार'' के सिद्धान्त को अपनाकर 'ग्राम स्वराज' या 'रामराज्य' पा सकता है।

गांधी के ग्रामीण पुनर्निर्माण के कार्यक्रमों में 18 सूत्र निम्नलिखित है-

सामुदायिक सदभावना, अस्पृश्यता निवारण, नशाबन्दी, ग्रामीण उद्योग, स्वच्छता, नई-तालीम, वयस्क शिक्षा, महिला विकास, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता सबंधीशिक्षा, क्षेत्रीय भाषाओं का विकास, राष्ट्र भाषा, आर्थिक समानता, किसान, मजदूर, आदिवासी रोगियों एवं छात्रों सम्बन्धित समुचित योजनाएं गांधी जी के ग्रामीण पुर्ननिर्माण कार्यक्रम के 18 सूत्र थे।

गांधी की परिकल्पना कितनी साकार: गांधी की ग्रामीण विकास के द्वारा देश के विकास का स्वप्न आजादी के 70 वर्ष बाद कितना पूरा हुआ, इसके अवलोकन व आत्मचिन्तन की आवश्यकता है।

गांधी के समय के 7.5 लाख गांवों का देश आज भी 6.4 लाख गांवों में बसता है, लगभग 18 करोड़ घर इन गांवों में देश की लगभग 68 प्रतिशत जनसंख्या को समेटे है। लिंग अनुपात आज भी गांव में शहर की तुलना में बेहतर है। (949-929) साक्षरता के क्षेत्र में गांव अत्यधिक पिछड़े है, आज भी ग्रामीण साक्षरता का प्रतिशत शहरी साक्षरता अनुपात (84.1प्रतिशत) से बहुत पीछे (67.8प्रतिशत) है। गरीबी रेखा के नीचे की जनसंख्या गांव में शहर के मुकाबले काफी ऊपर है। पीने के पानी की पाइपलाइन से आपूर्ति गांव में मात्र 30 प्रतिशत लोगों को उपलब्ध है जबिक शहरों में यह 70.6प्रतिशत है। गांवों में शौचालयों की सुविधा पिछले वर्षों में तीव्रता से बढ़ी है। शौचालय निर्माण आज ग्रामीण जीवन का आवश्यक अंग बन चुका है।गांवों में रहने वाली जनसंख्या की विद्युत उपलब्धता में तेजी से विकास हो रहा है, जन्मदर (22.4प्रतिशत) एवं मृत्युदर

(7.1प्रतिशत) दोनों में ही गांव शहरों (17.3प्रतिशत एवं 5.4प्रतिशत) से ऊपर है, उपरोक्त आंकड़े मात्र सांकेतिक है। विकास के स्तर पर गांव में अभी भी बहुत कुछ करने की जरूरत है, चाहे वह चिकित्सा, शिक्षा, सफाई, इन्फ्रास्ट्रक्चर के क्षेत्र हो या समन्वित विकास के अन्य आयाम, गांव के जीवन में गांधी की परिकल्पना को साकार करने की आवश्यकता है। देश का समन्वित विकास बिना ग्रामीण क्षेत्र के समन्वय के अधूरा एवं असंभव है।

ग्राम स्वराज एवं रामराज्य की दिशा में प्रयास:

आजादी के बाद भारत एशिया का पहला देश बना जिसने योजना आयोग का गठन कर सुनियोजित विकास का मार्ग चुना। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विकास की नीतियां बनी व ग्रामीण विकास को प्राथमिकता दी गई। अनेक योजनाओं के माध्यम से गांवों की व्यथा को हल करने के उपाय हुए परन्तु भौगोलिक आर्थिक एवं मानवीय सीमाओं के कारण अपेक्षाकृत परिणाम नहीं मिलें।

गांवों के उत्थान के लिए कुछ योजनाएं निम्नलिखित है:-

- दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना
- रोशनी- जनजातियों में कौशल विकास योजना
- स्वच्छ भारत मिशन (SBM)
- सांसद आदर्श ग्राम योजना (SAG)
- महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना (MGNAREGS)
- राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका अभियान (NRLM)
- प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY)

- प्रधानमंत्रीय जन-धन योजना (PMJDY)
- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना
- ग्राम पंचायत विकास योजना (GPDP)

गांवों से शहरों में जाने की होड़ ने गांवों को और असहाय बना दिया है,एक ओर जहां युवा शहरों में अपना भविष्य देख गांव को छोड़ रहे है, वही ग्रामीण क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनो का उपयोग न होना, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को बाधित कर रहे हैं।

शहरीकरण नही; ग्राम सुदृढ़ीकरण है समाधान-

गांधी के सपनों के ग्राम स्वराज को साकार करने के लिए गांधी दर्शन को अपनाना आवश्यक है। शहरों की ओर भागना समाधान नही, पलायनवाद है।

गांधी के अनुसार, ग्रामीण विकास एवं ग्रामीण कौशल्य विकास से ही देश का विकास संभव है। गांधी जी का मानना था कि उनके आदर्श गांव में बुद्धिजीवी एक स्वच्छ परिवेश में रहेंगे। वहां स्वच्छ वातावरण के कारण बीमारियां नहीं होगी, प्रत्येक व्यक्ति श्रमदान करेगा एवं प्रत्येक गांव में मूलभूत सुविधाएं होगी। गांधी के दर्शन पर आधारित PURA की अवधारणा डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने दी, और आज गांवों में पलायन (Migration) रोकने व गांवों के आर्थिक विकास के लिए रूरबन योजना लागू हुई है, जिससे ग्रामोद्योगों को बल मिलेगा। देश में आत्मनिर्भरता का प्रतीक ''खादी'' आज एक नये अवतार के रूप में दिख रहा है।

भौगोलिक एवं मानवीय सीमाओं का समाधान उपयुक्त तकनीकी से किया जा रहा है। सूचना तकनीकी का सफल उपयोग ग्रामीण विकास की योजनाओं में कर एक क्रांतिकारी कदम लिया गया है, सूचना तकनीकी के उपयोग से सभी नागरिकों को आज समान अवसर मिल रहा है।

आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए "Startup-India" (स्टार्ट-अपइंडिया), रूरबन आदि कार्यक्रमों को ग्रामीण विकास से जोड़ा जा रहा है। गांधी का स्वप्न शिक्षा को गांवों तक पहुचाने के लिए वयस्क शिक्षा के कार्यक्रमों ग्रामीणजनों को बौद्धिक स्तर पर समर्थ कर रहे है।

"स्वच्छ भारत अभियान (ग्रामीण)" वर्तमान सरकार का एक प्रयास है गांधी जी के स्वच्छ भारत की परिकल्पना को मूर्तरूप देना।

जैविक खेती को भारत में पुनर्जीवित करना गांधी जी को एक सच्ची श्रद्धांजली है। स्वच्छ एवं समृद्ध गांव शहरों की ओर पलायन को रोकने, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में आज सक्षम प्रतीत होते है।

उपसंहार/निष्कर्षः

गांधी का दर्शन भारत का ही नहीं वरन् सम्पूर्ण मानवजाति के भविष्य के लिए सकारात्मक सोच को प्रस्तुत करता है, गांधी भविष्यवादी थे। उनके विचारों में सूर्य की रोशनी का अमरत्व एवं आकाश सी विशालता का तत्व है।

गांधी दर्शन आज मात्र एक विकल्प नही वरन् आवश्यकता है।

नोबेल पुरस्कार विजेता डाँ० मार्टिन लूथर किंग के 1959 के भारत दौरे के दौरान जब एक पत्रकार ने पूछा, 'आज गांधी कहाँ हैं?'आज हमें वे कही नही दिखते। लूथर का जवाब था 'मानवता के विकास के लिए गांधी आवश्यक है। विश्वशान्ति एवं सौहार्द गांधी के दर्शन के बिना संभव नही। यदि हम उन्हें भुलाते है तो हमें परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहना होगा।'

2. राजभाषा हिन्दी के प्रबल समर्थक – महात्मा गांधी *राकेश शर्मा "निशीथ"

राष्ट्रभाषा-राजभाषा हिन्दी के प्रयोग और प्रचार की जब-जब बात उभरती है, महात्मा गांधी के राष्ट्रभाषा-राजभाषा हिन्दी संबंधी विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक प्रतीत होते हैं, जितने कि स्वतंत्रता के पूर्व थे। गांधी जी का जितना सर्वतों मुखी व्यक्तित्व विराट था, उतना ही सर्वतों मुखी व्यापक प्रभाव उनका हिन्दी-साहित्य पर ही नहीं, बल्कि सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य पर भी पड़ा। दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीय, जिनमें तिमल, तेलुगु, मलयालयम और बांग्ला भाषी लोग भी थे, आपसी विचार-विनिमय के लिए हिन्दी का ही प्रयोग करते थे। इस बात ने महात्मा गांधी को अफ्रीका प्रवास के दौरान काफी प्रभावित किया था।

गांधी जी ने मातृभाषा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए 15 अक्तूबर, 1917 को भागलपुर में अपना भाषण देते हुए कहा था "............ हमने मातृभाषा का अनादर किया है । इस पाप का कडुवा फल हमें जरूर भोगना पड़ेगा । हममें और हमारे घर के लोगों के बीच कितना ज्यादा व्यावधान पैदा हो गया है, इसके साक्षी इस सम्मेलन में आने वाले हम सभी हैं । हम जो कुछ सीखते हैं वह अपनी माताओं को नहीं समझाते और न समझा सकते हैं । जो शिक्षा हमें मिलती है, उसका प्रचार हम अपने घर में नहीं करते और न कर सकते हैं । ऐसा दुखद परिणाम अंग्रेज कुटुम्बों में कभी नहीं देखा जाता । इंग्लैंड में और दूसरे देशों में जहां शिक्षा मातृभाषा में दी जाती है, वहां विद्यार्थी स्कूलों में जो कुछ पढ़ते हैं, वह घर आकर अपने-अपने माता-पिता को सुनाते हैं और घर के नौकर-चाकर और दूसरे लोगों

^{13/488,} लोधी कालोनी, नई दिल्ली - 110003 मोबाइल- 9899650039/9868538530, ई-मेल - rakeshnisheeth@gmail.com

को भी वह मालूम हो जाता है। इस तरह जो शिक्षा बच्चों को स्कूल में मिलती है, उसका लाभ देश भर के लोगों को भी मिल जाता है। हम तो स्कूल-कॉलेज में जो कुछ पढ़ते हैं वह वहीं छोड़ आते हैं। विद्या हवा की तरह बहुत आसानी से फैल सकती है। किन्तु जैसे कंजूस अपना धन गाड़कर रखता है, वैसे ही हम अपनी विद्या को अपने में ही भरे रखते हैं और इसलिए उसका फायदा औरों को नहीं मिलता"।

वर्ष 1919 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के 9 वें अधिवेशन की तैयारी के दौरान आयोजित एक बैठक में गांधी जी ने अपना भाषण (गुजराती) में दिया । उन्होंने उसमें कहा, "आज हम जिस कार्य के लिए एकत्रित हुए हैं, उसकी दृष्टि से मुझे हिन्दी में बोलना चाहिए । लेकिन इस समय में जान-बूझकर हिन्दी में नहीं बोल रहा हूं, क्योंकि में इस भाषा की खूबियां आपको समझाना चाहता हूं । ये खूबियां में आपको गुजराती में समझाऊंगा । मेरा ख्याल है कि गुजराती भाषा में इन्हें बता सकने की मुझमें विशेष शिक्त है । हिन्दुस्तान में इस समय जो सत्याग्रह आंदोलन चल रहा है, हिन्दी भाषा का आग्रह भी उसमें आ जाता है । सत्य का आग्रह करना, सत्याग्रह की मुख्य बात है और यदि हम इस पर विचार करने बैठें तो हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि इस विचार से राष्ट्रीय भाषा के रूप में हमें हिन्दी में ही बोलना पड़ेगा । ऐसी एक भी अन्य देशी भाषा नहीं है, जो हिन्दी के साथ स्पर्धा कर सके ।

हिन्दी भाषा क्या है हमें इस बात पर थोड़ा विचार करना होगा । मैं यह नहीं मानता कि हिन्दी अर्थात् वह भाषा जिसमें संस्कृत के शब्द आते हैं, कृत्रिम भाषा है । इसी तरह उर्दू भी, जिसमें फारसी के शब्द हैं, वह हिन्दी और उर्दू का मिलाजुला रूप है । बहुत करके यह भाषा इस समय बिहार, दिल्ली तथा पंजाब में बोली जाती है । हिन्दू और मुसलमान दोनों एक नहीं हैं — जब यह भावना लोगों के दिलों में घर करने लगी और जब दोनों के बीच द्वेष-भाव उत्पन्न हुआ, तब इन दोनों भाषाओं में रस्साकशी होने लगी । कुछ-एक लोगों ने, जिसमें संस्कृत के शब्द होते हैं, उस भाषा को ही हिन्दी कहा तथा कुछ ने फारसी और अरबी भाषा से युक्त भाषा को ही उर्दू कहा । लेकिन सामान्य हिन्दू और मुसलमान जो बोलते हैं, वह भाषा तो ऐसी नहीं है । हम चाहे जिस जगह जाए और हिन्दु-मुसलमानों को बोलते हुए सुने, देखेंगे कि उसमें संस्कृत, फारसी तथा अरबी के शब्द आते हैं और हिन्दू हों अथवा मुसलमान, कोई भी इनका त्याग नहीं करते । ऐसी मिश्रित भाषा को स्वीकार करने से हम हिन्दू और मुसलमानों का हदय स्वच्छ हो जाएगा"।

गांधी जी के अनुसार विदेशी भाषा के आगे अपनी भाषा के महत्व और गौरव को भुला देना ठीक नहीं है । वर्ष 1921 में उन्होंने यंग इंडिया में लिखा था, "युवक और युवितयां अंग्रेजी और दुनिया की दूसरी भाषाएं खूब पढ़ें और जरूर पढ़ें । लेकिन उनसे मैं आशा करूंगा कि वे अपने ज्ञान का प्रसाद भारत के और सारे संसार को उसी तरह प्रदान करेंगे, जैसे बोस, राय और स्वयं किव रवीन्द्रनाथ ने प्रदान किया है । मगर मैं हरगिज यह नहीं चाहूंगा कि कोई भी हिन्दुस्तानी अपनी मातृभाषा को भूल जाए या उसकी उपेक्षा करे या उसे देखकर शरमाए अथवा यह महसूस करे कि अपनी मातृभाषा के जिरए वह ऊंचा चिंतन नहीं कर सकता है" ।

गांधी जी अंग्रेजी को भारत का बोझ मानते थे और इसके मोह में पड़ने वालों को वह समझाते और फटकारते थे । गांधी जी राष्ट्रभाषा के साथ-साथ मातृभाषा को भी पूरा सम्मान देते थे । जो लोग हिन्दी में नहीं बोल पाते, उनसे वह अपनी मातृभाषा में बोलने का आग्रह करते थे । उनका कहना था, "मैं पाश्चात्य संस्कृति का विरोधी नहीं हूं । मैं अपने घर के खिड़की-दरवाजों को खुला रखना चाहता हूं, जिससे बाहर की स्वच्छ हवा आ सके । लेकिन विदेशी भाषाओं की ऐसी आंधी न आ जाए कि मैं औंधे मुंह गिर पड़ें । भारतीय अंग्रजी ही क्यों, अन्य भाषाएं भी पढ़े, परंतु जापान की तरह उनका उपयोग स्वदेश हित में किया जाए । जापान की कुछ बातें सचम्च हमारे लिए अनुकरणीय हैं । जापान के लड़कों और लड़कियों ने यूरोप वालों से जो कुछ पाया है, सो अपनी मातृभाषा जापानी के जरिये ही पाया है, अंग्रेजी के जरिये नहीं । जापानी लिपि बहुत कठिन है, फिर भी जापानियों ने रोमन लिपि को कभी नहीं अपनाया । उनकी सारी तालीम जापानी लिपि और जापानी जुबान के जरिये ही होती है । जो चुने हुए जापानी पश्चिमी देशों में खास किस्म की तालीम के लिए भेजे जाते हैं, वे भी जब आवश्यक ज्ञान पाकर लौटते हैं तो अपना सारा ज्ञान अपने देशवासियों को जापानी भाषा के जरिये ही देते हैं"।

दक्षिण में हिन्दी प्रचार का कार्य वर्ष 1918 से 1927 तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन की ओर से गांधी जी के संरक्षण में होता है । वर्ष 1927 में गांधी जी के सुझाव पर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना हुई । दक्षिण में हिन्दी में प्रचार कार्य आगे बढ़ता रहा परन्तु वे उसकी प्रगति से संतुष्ट नहीं हुए । उन्होंने वर्ष 1935 में इस कार्य का निरीक्षण करने और आवश्यक सुधार सुझाने के लिए काका उत्तर प्रदेश में हिन्दीतर प्रदेशों में हिन्दी प्रचार के लिए मेरा आशीर्वाद आपके साथ है । दक्षिण में जाओ और वहां कार्य करो" । इसके फलस्वरूप वर्ष 1936 में तमिल, तेलुगु, कन्नड और मलयालम प्रदेश के लिए चार प्रांतीय सभाओं की स्थापना हुई । इसकी देखरेख के लिए हिन्दी प्रचार समिति की स्थापना हुई । इसका नाम आगे चलकर वर्ष 1937 में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति रखा गया ।

महात्मा गांधी ने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के पदवीदान समारंभ के अवसर पर दीक्षांत भाषण दिया था, जो राष्ट्रभाषा के पद पर हिन्दी को आसीन करने की वकालत करता है । उसमें उन्होंने कहा था, "मैंने अपने मन में कहा, गुजराती मेरी मातृभाषा है, पर वह राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती । देश की 30 वें हिस्से से अधिक जनसंख्या गुजराती भाषा-भाषी नहीं है । उसमें मुझे तुलसीदास की रामायण कहां मिलेगी ? तो क्या मराठी राष्ट्रभाषा हो सकती है ? मराठी भाषा से मुझे प्रेम है । मराठी बोलने वाले लोगों में मेरे साथ काम करने वाले कुछ बड़े पक्के और सच्चे साथी हैं । महाराष्ट्रियों की योग्यता. आत्मबलिदान की उनकी शक्ति और उनकी विद्वता का मैं कायल हूं । तो भी जिस मराठी भाषा का लोकमान्य तिलक ने गरज में उपयोग किया, उसे राष्ट्रभाषा बनाने की कल्पना मेरे मन में नहीं उठी । जिस वक्त मुझे हिन्दी भाषा-भाषियों की ठीक-ठाक संख्या भी मालूम नहीं थी, उस वक्त भी मुझे खुद-ब-खुद यह लगा कि राष्ट्रभाषा की जगह एक हिन्दी ही ले सकती है – दूसरी कोई जुबान नही । क्या मैंने बंगला की प्रशंसा नहीं की ? मैंने की है, और चैतन्य, राममोहन राय, रामकृष्ण, विवेकानन्द और रवीन्द्रनाथ ठाक्र की मातृभाषा होने के कारण मैंने उसे सम्मान की दृष्टि से देखा है। फिर भी मुझे लगा कि बंगला को हम अन्तर्प्रान्तीय आदान-प्रदान की भाषा नहीं बना सकते । तो क्या दक्षिण भारत की कोई भाषा बन सकती है ? यह बात नहीं कि मैं इन भाषाओं से बिलकुल ही अनिभन्न था । पर तिमल या दूसरी कोई दिक्षण भारतीय भाषा राष्ट्रभाषा कैसे हो सकती है ? तब हिन्दी जुबान, बाद को जिसे हम हिन्दुस्तानी या उर्दू भी कहने लगे हैं और जो देवनागरी और उर्दू लिपि में लिखी जाती है, वही माध्यम हो सकती है, और है" ।

01 फरवरी, 1942 को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में महात्मा गांधी ने दीक्षांत भाषण में जो उद्गार व्यक्त किए थे वे आज भी प्रासंगिक हैं। उन्होंने कहा था कि, "अंग्रेजों को हम गालियां देते हैं कि उन्होंने हिन्दुस्तान को गुलाम बना रखा है, लेकिन अंग्रेजी के तो हम खुद ही गुलाम बन गये हैं । अंग्रेजों ने हिन्द्स्तान के काफी पामाल किया है । इसके लिए मैंने उनकी कड़ी से कड़ी टीक भी की है, परन्त् अंग्रेजी क अपनी इस गुलामी के लिए मैं उन्हें जिम्मेदार नहीं समझता । खुद अंग्रेजी सीखने और अपने बच्चों के अंग्रेजी सीखाने के लिए हम कितनी-कितनी मेहनत करते हैं । अगर कोई हमें यह कहता है कि हम अंग्रेजों की तरह अंग्रेजी बोल लेते हैं तो हम मारे खुशी से फूले नहीं समाते । इससे बढ़कर दयनीय गुलामी और क्या हो सती है ? इसकी वजह से हमारे बच्चों पर कितना जुल्म होता था । अंग्रेजी के प्रति हमारे इस मोह के कारण देश की कितनी शक्ति और कितना श्रम बरबाद होता है ? मेरी समझ में ते इसक कारण भी यही है कि हमारे विद्यार्थियों पर अंग्रेजी जुबान का बोझ इतना पड1 जाता है कि उन्हें दूसरी तरु सिर उठाकर देखने की फ्रसत ही नहीं मिलती । यही वजह है कि उन्हें दरअसल जो सीखना चाहिए उसे वे सीख नहीं पाते" ।

राष्ट्रीय एकता के लिए उन्होंने हिन्दी को सबसे उपयुक्त माना, तभी तो उनका कहना था कि, "हिन्दी भाषी लोगों को दक्षिण की भाषा सीखने की जितनी जरूरत है, उसकी अपेक्षा दक्षिण वालों को हिन्दी सीखने की आवश्यकता अवश्य ही अधिक है । सारे हिन्दुस्तान में हिन्दी बोलने और समझने वालों की संख्या दक्षिण की भाषाएं बोलने वालों से दुगुनी है । प्रान्तीय भाषा या भाषाओं के बदले में नहीं, बिल्क उनके अलावा एक प्राप्त से दूसरे प्रान्त का संबंध जोड़ने के लिए एक सर्वमान्य भाषा की आवश्यकता है । ऐसी भाषा तो एकमात्र हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही हो सकती है" ।

हिन्द स्वराज में वर्ष 1901 में उन्होंने राष्ट्रभाषा की समस्या पर लिखा था, "हर पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी को अपनी भाषा, हिन्दी और संस्कृत, मुसलमान को अरबी, पारसी को पर्शियन और सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए । कुछ हिन्दुओं को अरबी और कुछ मुसलमानों को पर्शियन और संस्कृत सीखनी चाहिए । उत्तर और पश्चिम में रहने वाले हिन्द्स्तानी को तमिल सीखनी चाहिए । सारे हिन्द्स्तान के लिए तो हिन्दी ही होनी चाहिए । उसे उर्दू या नागरी लिपि में लिखने की छूट रहनी चाहिए । हिन्दू-मुसलमानों के विचारों को ठीक प्रकार से जानने के लिए बह्त-से हिन्दुस्तानियों का दोनों लिपियां जानना जरूरी है । ऐसा होने पर हम आपसी व्यवहार से अंग्रेजी को निकाल बाहर कर सकेंगे" । गांधी जी अंतिम समय में देश के एकीकरण को दृष्टि में रखकर हिन्दी को हिन्दुस्तानी कहने लगे थे । हिन्दुस्तानी का उनका आशय हिन्दू और मुसलमान दोनों की भाषा को एक छत के नीचे लाना था । उनका मानना था कि संस्कृतमयी हिन्दी बिलकुल बनावटी है और हिन्द्स्तानी बिलकुल स्वाभाविक । उसी तरह फारसीमयी उर्दू अस्वाभाविक और बनावटी है । उनका मानना था कि

राष्ट्रभाषा में जनता में मान्य एवं प्रचलित शब्दों के ही लिया जाए । कुरसी के स्थान पर चतुष्पाद पीठिका लिखना मुर्खता है ।

गांधी जी क्लिष्ट हिन्दी के प्रयोग की बात नहीं सोचते थे। वे चाहते थे कि ऐसी हिन्दी का प्रयोग हो, जिसे आम हिन्दुस्तानी समझ सके। वे चाहते थे कि विधि, न्याय और प्रशासन की भाषा ऐसी होनी चाहिए, जिसे समझने के लिए आम आदमी को किसी वकील या बिचौलिये की आवश्यकता न हो। भड़ौंच में गुजरात शिक्षा परिषद के सभापति पद से बोलते हुए उन्होंने राष्ट्रभाषा के पांच अभिलक्षण स्पष्ट किये थे। वे हैं – अमलदारों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए, उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार हो सकना चाहिए, यह जरूरी है कि भारतवर्ष के बहुत-से लोग उस भाषा को बोलते हों, राष्ट्र के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए तथा उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्पस्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना चाहिए।

गांधी जी ने आग्रह किया कि देश की भाषा द्वारा ही शिक्षा दी जाए । इसके विषय में उनका कहना था कि "विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा पाने में दिमाग पर जो बोझ पड़ता है वह असह्य है । यह बोझ हमारे बच्चे उठा तो सकते हैं, लेकिन उसकी कीमत उन्हें चुकानी पड़ती है, वे दूसरा बोझ उठाने के लायक नहीं रह जाते । इससे हमारे स्नातक अधिकतर निकम्मे, कमजोर, निरुत्साही, रोगी और कोरे नकलची बन जाते हैं । उनमें खोज करने की शिक्त, विचार करने की शिक्त, साहस, धीरज, वीरता, निर्भयता और अन्य गुण बहुत झीण हो जाते हैं । इससे हम नई योजनाएं नहीं बना सकते और यदि बनाते हैं तो उन्हें पूरा नहीं कर पाते" ।

गांधी जी की भाषा संबंधी नीति का एक महत्वपूर्ण पक्ष राष्ट्रभाषा की शैली को लेकर है । उन्होंने हिन्दी की हिन्दुस्तानी शैली के प्रचारप्रसार पर बल दिया । वे चाहते थे कि राष्ट्रभाषा हिन्दी उत्तर भारत के जन-जन की भाषा उर्दूनिष्ठ हिन्दी हो । यह जनसाधारण की भाषा है । एक बार उन्होंने कहा था, "मैं शायद सारे देश में ज्यादा घूमाफिरा हूं, और पढ़े-लिखे व अनपढ़ों को मिलाकर सबसे ज्यादा लोगों से मिला हूं, और मैं सोच-समझकर इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि राष्ट्रभाषा का कारोबार चलाने के लिए या विचार-विनिमय के लिए हिन्दुस्तानी को छोड़कर दूसरी कोई भाषा शायद ही राष्ट्रीय माध्यम बन सके । हिन्दुस्तानी यानी हिन्दी और उर्दू के मिलाप से पैदा होने वाली भाषा" । काका साहब कालेलकर, विनोबा भावे, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, पंडित जवाहरलाल नेहरू, प्रेमचंद जैसे लोगों ने हिन्दी की इस शैली को आत्मसात भी किया था ।

गांधी जी ने अहिन्दी भाषी प्रांतों के लोगों को हिन्दी सीखने का परामर्श दिया । उन्होंने कहा, "मैं हमेशा से यह मानता रहा हूं कि हम किसी भी हालत में प्रान्तीय भाषाओं को मिटाना नहीं चाहते हैं । हमारा मतलब तो सिर्फ यह है कि विभिन्न प्रान्तों के पारस्परिक संबंध के लिए हम हिन्दी भाषा सीखें । ऐसा कहने में हिन्दी के प्रति हमारा कोई पक्षपात प्रकट नहीं होता । हिन्दी को हम राष्ट्रभाषा मानते हैं । वह राष्ट्रीय होने के लायक है । वही भाषा राष्ट्रीय बन सकती है, जिसे अधिसंख्यक लोग जानते, बोलते हो और जो सीखने में स्गम हो । ऐसी भाषा हिन्दी ही है ।

इसका कोई वजन देने लायक विरोध आज तक सुनने में नहीं आया है। अन्य प्रान्तों ने भी इस बात को स्वीकार कर लिया है"।

इंदौर में 20 अप्रैल, 1935 को हिन्दी साहित्य सम्मेलन के 24 वें अधिवेशन के अध्यक्ष पद से महात्मा गांधी ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा था, "मेरा हिन्दी भाषा का ज्ञान नहीं के बराबर है। आपकी प्रथमा परीक्षा में मैं उत्तीर्ण नहीं हो सकता हूं। लेकिन हिन्दी भाषा का मेरा प्रेम किसी से कम नहीं ठहर सकता। मेरा क्षेत्र दक्षिण में हिन्दी-प्रचार है। ... आप पूछ सकते हैं कि केवल दक्षिण ही में हिन्दी प्रचार के लिये क्यों? मेरा उत्तर यह है कि दक्षिण भारत कोई छोटा मुल्क नहीं है। वह तो एक महाद्वीप-सा है। वहां चार प्रान्त और चार भाषाएं हैं – तमिल, तेलुगु, मलयाली और कन्नड़ी। आबादी करीब सवा सात करोड़ है। इतने लोगों में यदि हम हिन्दी-प्रचार की नींव मजबूत कर सकें तो अन्य प्रान्तों में बहुत ही सुभीता हो जाएगा।

यद्यपि मैं इन भाषाओं को संस्कृति की पुत्रियां मानता हूं, तो भी ये हिन्दी, उडिया, बंगला, आसामी, पंजाबी, सिंधी, मराठी, गुजराती से भिन्न हैं । इनका व्याकरण हिन्दी से बिल्कुल भिन्न है । इनको संस्कृत की पुत्रियां कहने से मेरा अभिप्राय इतना ही है कि इन सब में संस्कृत शब्द काफी हैं । जब संकट आ पड़ता है, तब ये संस्कृत माता को पुकारती हैं और उसका नये शब्द रूपी दूध पीती हैं । प्राचीन काल में भले ही ये स्वतंत्र भाषाएं रही हों, पर अब तो ये संस्कृत में से शब्द लेकर अपना गौरव बढ़ा रही हैं । इसके अतिरिक्त और भी तो कई कारण इनको संस्कृत की पुत्रियां कहने के हैं, पर उन्हें इस समय जाने दीजिये । जो भी हो, इतनी बात तो निर्विवाद है कि

दक्षिण में हिन्दी प्रचार सबसे किठन कार्य हैं। ... यदि हिन्दी अंग्रेजी का ज्ञान ले तो कम-से-कम मुझे तो अच्छा ही लगेगा। लेकिन अंग्रेजी भाषा के महत्व को हम अच्छी तरह जानते हैं। आधुनिक ज्ञान की प्राप्ति, आधुनिक साहित्य के अध्ययन, सारे जगत के परिचय, अर्थ प्राप्ति, राज्याधिकारियों के साथ संपर्क रखने और ऐसे ही अन्य कार्यों के लिए अंग्रेजी ज्ञान की हमें आवश्यकता है। इच्छा न रहते हुए भी हमको अंग्रेजी पढ़नी होगी। यही हो भी रहा है। अंग्रेजी अंतरराष्ट्रीय भाषा है।

लेकिन अंग्रेजी राष्ट्रभाषा कभी नहीं बन सकती । आज इसका साम्राज्य—सा जरूर दिखायी देता है । इससे बचने के लिए काफी प्रयत्न करते हुए भी हमारे राष्ट्रीय कार्यों में अंग्रेजी ने बहुत स्थान ले रखा है । लेकिन इससे हमें इस भ्रम में कभी न पड़ना चाहिए कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बन रही है । इसकी परीक्षा प्रत्येक प्रान्त में हम आसानी से कर सकते हैं । बंगाल अथवा दक्षिण भारत को ही लीजिये, जहां अंग्रेजी का प्रभाव सबसे अधिक है । वहां यदि जनता की मार्फत हम कुछ भी काम करना चाहते हैं तो वह आज हिन्दी द्वारा भले ही न कर सकें, पर अंग्रेजी द्वारा तो नहीं ही कर सकते । हिन्दी के दो-चार शब्दों से हम अपना भाव कुछ तो प्रगट कर ही देंगे । पर अंग्रेजी से तो इतना भी नहीं कर सकते । हां, यह अवश्य माना जा सकता है कि अब तक हमारे यहां एक भी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई है ।

अंग्रेजी राजभाषा है । ऐसा होना स्वाभाविक भी है । अंग्रेजी का इससे आगे बढ़ना मैं असंभव समझता हूं, चाहे कितना भी प्रयत्न क्यों न किया जाए । हिन्दस्तान को अगर सचमुच एक राष्ट्र बनना है तो – चाहे कोई माने या न माने राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता । हिन्दू मुसलमान दोनों को मिलाकर, करीब 22 करोड़ मनुष्यों की भाषा थोड़े-बहुत फेरफार से, हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही है । इसलिए उचित और संभव तो यही है कि प्रत्येक प्रान्त में उस प्राप्त की भाषा, सारे देश के पारस्परिक व्यवहार के लिए हिन्दी और अन्तरराष्ट्रीय उपयोग के लिए अंग्रेजी का व्यवहार हो । अंग्रेजी बोलने वालों की संख्या कुछ लाख से आगे कभी नहीं बढ़ सकेगी । इसका प्रयत्न भी करना जनता के साथ अन्याय करना होगा । ...

इस मौके पर अपने दुख की भी कुछ कहानी कह दूं। हिन्दी भाषा राष्ट्रभाषा बने या न बने, मैं उसे छोड़ नहीं सकता। तुलसीदास का पुजारी होने के कारण हिन्दी पर मेरा मोह रहेगा ही। लेकिन हिन्दी बोलने वालों में रवीन्द्रनाथ कहां हैं? प्रफुल्लचन्द्र राय कहां हैं? जगदीश बोस कहां हैं? ऐसे और भी नाम मैं बता सकता हूं। मैं जानता हूं कि मेरी अथवा मेरे जैसे हजारों की इच्छामात्र से ऐसे व्यक्ति थोड़े ही पैदा होने वाले हैं। लेकिन जिस भाषा को राष्ट्रभाषा बनना है, उसमें ऐसे महान व्यक्तियों के होने की आशा रखी ही जायेगी"।

बंगलौर में आयोजित हुए हिन्दी प्रचार सभा के उपाधि वितरण समारोह में उन्होंने भाषण दिया था, यह 5 जुलाई, 1936 को हरिजन में प्रकाशित हुआ था । इसमें उन्होंने कहा था, "आज जिन विद्यार्थियों को उपाधि और प्रमाणपत्र मिले हैं, उन्हें मैं धन्यवाद देते हुए यह कहना चाहता हूं कि वे अपना अभ्यास रोज कर अपना जान बढ़ाते रहेंगे । स्कूलों-कॉलेजों में पढ़ने वाले कॅरिअर के लिए पढ़ते हैं, परीक्षा में अच्छे नम्बर प्राप्त करने के लिए पढते हैं लेकिन परीक्षा भवन से निकलते ही अपनी प्स्तकों और ज्ञान को भूल जाते हैं । अधिकांश लोगों को ज्ञान की न. हीं उपाधि की चिन्ता होती है । आज जिन लोगों को उपाधि मिली है, वह उपाधि के लिए दी गई उपाधि नहीं है । इसका सीधा-सादा कारण यह है कि हिन्दी प्रचार सभा का उद्येश्य नौकरी दिलाना नहीं है । यां यूं कहें कि यह उपाधि उस ज्ञान का चिह्नमात्र है, जो आपको अपने गुरू से मिला है । मुझे यह देखकर खुशी होती है कि हिन्दुस्तान की मुक्ति उसके स्त्री-समाज के त्याग और ज्ञान पर निर्भर है । महिलाओं की सभा में मैं यह कहता रहा हूं कि जब हम अपने देवी-देवताओं या प्रचीन स्त्री-प्रूषों के बारे में कुछ कहते हैं तो स्त्री का नाम पहले लेते हैं । उदाहरण के तौर पर -सीता-राम, राधा-कृष्ण आदि । हम कभी भी राम-सीता या कृष्ण राधा नहीं कहते । हमारे यहां स्त्री का आदर और उनकी योग्यता की खास कद्र की जाती थी । हमें यह वर्षों प्राना रिवाज जारी रखना है । अंग्रेजी सीखने में जितना समय लगेगा उतना हिन्दी-हिन्द्स्तानी बोलने और समझने वाले हिन्दू-मुसलमानों की संख्या बीस करोड़ से ज्यादा है । क्या एक करोड़ 10 लाख कर्नाटक के भाई-बहिन अपने बीस करोड़ भाई-बहिनों की भाषा सीखना पसन्द नहीं करेंगे?

आपने अभी-अभी लेडी रमण के हिन्दी व्याख्यान का कन्नड़ अनुवाद सुना है। उसे सुनते-सुनते आपने सोचा होगा कि लेडी रमण के बहुत से शब्द भाषान्तर में ज्यों—के-त्यों उपयोग में लिए गए हैं जैसे – प्रेम, प्रेमी संघ, सभा अध्यक्ष, पद, अनन्त, भिक्त, स्वागत, अध्यक्षता, सम्मेलन आदि। ये शब्द हिन्दी—कन्नड़ दोनों में प्रचलित हैं। जब हमारे कर्नाटक के मित्र कहते हैं कि हिन्दी उन्हें कठिन मालूम होती है तो मुझे हंसी आती है। मेरा यह विश्वास है कि रोज कुछ घंटे

लगन के साथ मेहनत करने से एक महीने में हिन्दी सीखी जा सकती है। मेरी उम्र 67 वर्ष की हो गई है, लोग कहेंगे कि कुछ नया सीखने की मेरी उम्र नहीं है। लेकिन आप यकीन मानिए कि जिस समय मैं कन्नड़ का अनुवाद सुन रहा था, उस समय मैंने यह अनुभव किया कि यदि मैं रोज कुछ घंटे कन्नड़ का अभ्यास करूं तो कन्नड़ भाषा सीखने में मुझे आठ दिन से अधिक का समय नहीं लगेगा। यहां बैठे माननीय शास्त्रीजी और मेरे जैसे दस-पांच को छोड़कर बाकी आप सभी नौजवान हैं। क्या हिन्दी सीखने के लिए एक महीने तक रोज के चार घंटे नहीं दे सकते? अपने 20 करोड़ देशवासियों से भाषा के आधार पर संबंध स्थापित करने के लिए इतना समय देना आपकों ज्यादा मालूम होता है। जिन लोगों को अंग्रेजी नहीं आती है क्या वे चार घंटे के अभ्यास से अंग्रेजी सीख सकते हैं? कभी नहीं।.....

अब मुसलमान मित्रों की चर्चा करें तो पता चलता है कि वे अपने-अपने राज्य की भाषा तो जानते ही हैं, इसके अलावा उन्हें उर्दू का भी अच्छा जान है । दोनों का व्याकरण एक जैसा है, लिपि के कारण दोनों में जो फर्क है, सो है । लेकिन इन पर विचार करने से पता चलता है कि हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू, ये तीनों एक ही भाषा के शब्द हैं । यदि इनके शब्दकोश को देखें तो भी पता चलता है कि इनके अधिकांश शब्द एक जैसे हैं । लेकिन ऐसा भी नहीं है कि मैं अंग्रेजी विरोधी हूं लेकिन अन्तरराष्ट्रीय संबंधों और पिस्मिमी ज्ञान-विज्ञान के लिए उसकी जरूरत है । लेकिन मुझे उस समय दुख होता है, जब अनावश्यक रूप से अंग्रेजी को सम्मान दिया जाता है ।

जब मैं दक्षिण अफ्रीका में था, उस समय भी यह मानता था कि संस्कृत से निकली सभी भाषाओं की लिपि देवनागरी होनी चाहिए । मुझे पूर्ण विश्वास है कि देवनागरी के माध्यम से द्रविड़ भाषाएं आसानी से सीखी जा सकती हैं। हालांकि मैंने भी तमिल, तेलगू और कुछ दिन तक कन्नड़ व मलयालम को भी उनकी अपनी लिपियों द्वारा सीखने का प्रयत्न किया है। मैं यह विश्वास के साथ कह सकता हूं कि अगर इन चारों भाषाओं की लिपि देवनागरी ही होती तो मैं इन्हें थोड़े समय में ही सीख सकता था। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रश्न नहीं मिलाना चाहिए। मैंने यहां उसका उल्लेख केवल यह सीखने के लिए किया है कि सभी भाषाएं सीखने वाले को लिपि के कारण कितनी कठिनाई होती है"।

15 अगस्त, 1947 को बी.बी.सी. लंदन को दिये गये अपने संदेश में गांधी जी ने कहा था, "विभिन्न प्रदेशों में अंग्रेजी बोलने वाले लोग काफी मिल जाते हैं, किन्तु उनकी संख्या बहुत ही थोड़ी है और हमेशा थोड़ी ही रहेगी । इसका मुख्य कारण यह है कि भाषा कठिन है और विदेशी है । साधारण मनुष्य इसे ग्रहण नहीं कर सकता । इसलिए यह संभव नहीं कि अंग्रेजी के जिरये भारत एक राष्ट्र बन जाए । अतः भारतीयों को भारत की ही कोई भाषा पसंद करनी पड़ेगी । करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा है । मैकाले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी ।

कहा जाता है कि आखिरकार भारत के अंग्रेजीदां ही देश का नेतृत्व कर रहे है और वे ही राष्ट्र के लिए सब कुछ कर रहे हैं । हमने पिछले पचास वर्षों में अपनी-अपनी भाषाओं के जरिये शिक्षा पाई होती तो हम आज किस स्थित में होते । तब हमारे पढ़े-लिखे लोग अपने ही देश में विदेशियों की तरह अजनबी न होते, बल्कि देश के हदय को छूने वाली वाणी बोलते, वे गरीब-से-गरीब लोगों के बीच काम करते और पचास वर्षों की उनकी उपलब्धि पूरे देश की विरासत होती । अंग्रेजी बोलने में मुझे ऐसा मालूम पड़ता है, मानों मुझे इससे पाप लगता है । आप लोग लाट साहब को या सरकार के दरबार में जो प्रार्थना पत्र भेजते हैं, तो किस भाषा में लिखकर भेजते हैं ? यदि हिन्दी भाषा में नहीं भेजते, तो हिन्दी भाषा में लिखकर भेजे । आप लोग कहेंगे कि हिन्दी भाषा में लिखकर भेजने से वे हमारी बात नहीं सुनेंगे । मैं कहता हूं कि आप अपनी भाषा में बोलें, अपनी भाषा में लिखें । उनको गरज होगी तो वे हमारी बात सुनेंगे । मैं अपनी बात अपनी भाषा में कहूंगा, जिसको गरज होगी, वह सुनेगा । आप इस प्रतिज्ञा के साथ काम करेंगे, हिन्दी भाषा का दर्जा बढ़ेगा ।

हिन्दी ही हिन्दुस्तान के शिक्षित समुदाय की सामान्य भाषा हो सकती है, यह बात निर्विवाद है। यह कैसे हो, केवल यही विचार करना है। जिस स्थान को आजकल अंग्रेजी भाषा लेने का प्रयत्न कर रही है और जिसे लेना उसके लिए असंभव है, वहीं स्थान हिन्दी को मिलना चाहिए क्योंकि हिन्दी का उस पर पूर्ण अधिकार है। यह स्थान उसको नहीं मिल सकता, क्योंकि वह विदेशी भाषा है और हमारे लिए बड़ी कठिन है। अंग्रेजी की अपेक्षा हिन्दी सीखना बहुत सरल है। हिन्दी जल्दी-से-जल्दी अंग्रेजी का स्थान ले ले, यह एक स्वयंसिद्ध उद्येश्य जान पड़ता है। हिन्दी शिक्षित वर्गों के बीच समान माध्यम ही नहीं, बल्कि जनसाधारण के हदय तक पहुंचने का द्वार बन सकती है। इस दिशा में देश की कोई भाषा इसकी समानता नहीं कर सकती और अंग्रेजी तो कदापि नहीं कर सकती"।

उनके अनुसार, "मातृभाषा का अनादर मां के अनादर के बराबर है । जो मातृभाषा का अपमान करता है, वह स्वदेशभक्त कहलाने लायक नहीं । बहुत-से लोग ऐसा कहते सुने जाते हैं कि हमारी भाषा में ऐसे शब्द नहीं, जिनमें हमारे ऊंचे विचार प्रकट किये जा सकें । किन्तु यह कोई भाषा का दोष नहीं । भाषा को बनाना और बढ़ाना हमारा अपना ही कर्तव्य है । एक समय ऐसा था जब अंग्रेजी भाषा की भी यही हालत थी । अंग्रेजी का विकास इसलिए हुआ कि अंग्रेज आगे बढ़े और उन्होंने भाषा की उन्नित की । यदि हम मातृभाषा की उन्नित नहीं कर सके और हमारा यह सिद्धांत रहे कि अंग्रेजी के जिरये ही हम अपनी उंचे विचार प्रकट कर सकते हैं और उनका विकास कर सकते हैं, तो इसमें जरा भी शक नहीं कि हम सदा के लिए गुलाम बने रहेंगे । जब तक हमारी मातृभाषा में हमारे सारे विचार प्रकट करने की शिक्त नहीं आ जाती और जब तक वैज्ञानिक विषय मातृभाषा में नहीं समझाये जा सकते, तब तक राष्ट्र को नया ज्ञान नहीं मिल सकेगा"।

उन्होंने कहा था, "अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा में कम-से-कम सोलह वर्ष लगते हैं । यदि इन्हीं विषयों की शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से दी जाए, तो ज्यादा-से-ज्यादा दस वर्ष लगेंगे । यह राय बहुत-से अनुभवी शिक्षकों ने प्रकट की है । हजारों विद्यार्थियों के छह-छह वर्ष बचने का अर्थ यह होता है कि कई हजार वर्ष जनता को मिल गये । विदेशी भाषा द्वसास शिक्षा पाने में दिमाग पर जो बोझ पड़ता है वह असह्य है । यह बोझ हमारे बच्चे उठा तो सकते हैं लेकिन उसकी कीमत उन्हें चुकानी पड़ती है । वे दूसरे बोझ उठाने के लायक नहीं रह जाते । इससे हमारे स्नातक अधिकतर निकम्मे, कमजोर, निरुत्साहित, रोगी और कोरे नकलची बन जाते हैं । उनमें खोज करने की शिक्त, विचार करने की शिक्त, साहस, धीरज, वीरता, निर्भयता और अन्य गुण बहुत क्षीण हो जाते हैं । इससे हम नयी

योजनाएं नहीं बना सकते और यदि बनाते हैं तो उन्हें पूरा नहीं कर पाते ।

एक अंग्रेज ने लिखा है कि मूल लेख और सोखता कागज के अक्षरों में जो भेद है, वहीं यूरोप और यूरोप के बाहर के लोगों में है । इस विचार में जो सच्चाई है वह कोई एशिया के लोगों की स्वाभाविक अयोग्यता के कारण नहीं है । इसका कारण शिक्षा का अयोग्य माध्यम चुन लेना है । अंग्रेजी शिक्षा पाये हुए हम लोग ही इस नुकसान का सही अनुमान नहीं लगा पाते । मुझे विश्वास है कि हमने 50 वर्षों तक मातृभाषा द्वारा शिक्षा पाई होती, तो हम में इतने बसु और राय होते कि उन्हें देखकर हमें अचमभा होता । जापान ने मातृभाषा द्वारा जन जागृति की है, इसलिए उनके हर काम में नयपन दिखाई देता है । दुनिया जापानियों का काम अचरज भरी आंखों से देख रही हे ।

विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने की पद्धित से अपार हानि होती है। मां के दूध के साथ जो संस्कार और मीठे शब्द मिलते हैं, उनके और पाठशाला के बीच जो मेल होना चाहिए, वह विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने से टूट जाता है। इस संबंध को तोड़ने वाले जनता के दुश्मन हैं। हम ऐसी शिक्षा के वशीभूत होकर मातृद्रोह करते हैं। विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा देने से शिक्षित वर्ग और सामान्य जनता के बीच में अंतर पड़ गया है। हम जनसाधारण को नहीं पहचानते। जनसाधारण हमें नहीं जानत। वे हमें साहब समझते हैं और हम से डरते हैं, वे हम पर भरोसा नहीं करते। यदि यही स्थिति अधिक समय तक कायम रही, तो एक दिन लार्ड कर्जन का यह

आरोप सही हो जाएगा कि शिक्षित वर्ग जनसाधारणका प्रतिनिधि नहीं है।

अंग्रेजी भाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप में भारत में जो स्थान मिला उसका परिणाम दुखद हुआ है। कुछ लोग कहते हैं कि अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त लोग ही देशभक्त हुए, पर हमें इससे बिल्कुल उलटी बात नजर आ रही है। ऐसे लोगों के देशप्रेम का प्रभाव जनसाधारण पर नहीं पड़ा। सच्चे देशप्रेम को तो व्यापक होना चाहिए और इनके देशप्रेम में यह गुण दिखाई नहीं देता। अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा देने से जनसाधारण की मानसिक शिक्त नष्ट होती है, तो एक पल की भी देरी किए बिना शिक्षा का माध्यम बदल दिया जाना चाहिए। इससे जो बाधाएं सामने आएं उन्हें दूर करने में ही हमारे पुरूषार्थ की कसौटी है।

समाज की हम जो सबसे बड़ी सेवा कर सकते हैं, वह यह है कि हमने अंग्रेजी भाषा की शिक्षा के प्रति जो अंधविश्वासपूर्ण सम्मान करना सीखा है, उससे स्वयं मुक्त हों और समाज को मुक्त करें । अंग्रेजी देश की अंतर भाषा बनती जा रही है । हमारे सर्वोत्तम विचार इसी में व्यक्तिकये जाते हैं । लाई चैम्सफोर्ड ने यह आशा व्यक्त की है कि अंग्रेजी कुछ ही दिनों में उच्च परिवारों की मातृभाषा बन जाएगी । अंग्रेजी प्रशिक्षण की आवश्यकता के बारे में इस प्रकार के विश्वास ने हमें गुलाम बना दिया है । इसने हमें सच्ची राष्ट्रीय सेवा के अयोग्य बना दिया है । इससे राष्ट्र का सर्वोत्तम मस्तिष्क निष्क्रिय हो गया है और जनता को नये उपलब्ध विचारों का लाभ नहीं मिल पाया । इतिहास में इस मूर्खता की तुलना नहीं है । यह एक दारुण राष्ट्रीय विपत्ति है । पहली और सबसे बड़ी समाज सेवा जो

हम कर सकते हैं वह यह है कि हम इस स्थिति से पीछे हटें, देशी भाषाओं को अपनाएं, हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में उसके स्वाभाविक पद पर पुन: प्रतिष्ठित करें और सभी प्रान्त अपना-अपना समस्त कार्य अपनी देशी भाषाओं में तथा राष्ट्र का कार्य हिन्दी में प्रारंभ कर दें।

यह भाषा का विषय बड़ा भारी और बड़ा ही महत्वपूर्ण है । यदि सब नेता सब काम छोडकर केवल इसी विषय पर लगे रहें तो बस है। यदि हम लोग भाषा के प्रश्न को गौण समझें या इधर से मन हटा लेंगे, तो इस समय लोगों में जो प्रवृत्ति चल रही है, लोगों के हदयों में जो भाव उत्पन्न हो रहा है. वह निष्फल हो जाएगा । भाषा माता के समान है । माता पर हमारा जो प्रेम होना चाहिए, वह हम लोगों में नहीं है । हम विदेशी भाषा द्वारा जो स्वातन्त्रय चाहते हैं वह नहीं मिल सकता, क्योंकि उसमें हम योग्य नहीं हैं । पहली माता (अंग्रेजी) से हमें जो दूध मिल रहा है, उसमें ज़हर और पानी मिला हुआ है और दूसरी माता (मातृभाषा) से श्द्ध दूध मिल सकता है । बिना इस श्द्ध दुध के मिले हमारी उन्निति होना असंभव है । पर जो अंधा है, वह देख नहीं सकता । गुलाम यह नहीं जानता कि अपनी बेडिया किस जरह तोड़े । पचास वर्षों से हम अंग्रेजी के मोह में फंसे हैं । हमारी प्रजा अज्ञान में डूबी रही है । हमें ऐसा उद्योग करना चाहिए कि एक वर्ष में राजकीय सभाओं में, कांग्रेस में, प्रान्तीय सभाओं में और अन्य सभा-समाजों और सम्मेलनों में अंग्रेजी का एक भी शब्द स्नाई न पड़े । हम अंग्रेजी का व्यवहार बिल्कुल त्याग दें । यदि अंग्रेज सर्वव्यापक न रहे तो अंग्रेजी भी सर्वव्यापक न रहेगी।

हमें अब अपनी मातृभाषा की और उपेक्षा करके उसकी हत्या नहीं करनी चाहिए । जैसे अंग्रेज अपनी मादरी जुबान अंग्रेजी में बोलते और सर्वथा उसे ही व्यवहार में लाते हैं, वैसे ही मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने क गौरव प्रदान करें । फ्रांस में रहने वाले अंग्रेज अपना सब व्यवहार अंग्रेजी में रखते हैं ? हमें अपने देश में अपने महत कार्य विदेशी भाषा में करते हैं। मेरा नम्र लेकिन दृढ़ अभिप्राय है कि जब तक हम हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय और अपनी-अपनी प्रान्तीय भाषाओं को उनका योग्य स्थान नहीं देते, तब तक स्वराज्य की सब बातें निरर्थक हैं। ऐसी एक भी अन्य देशी भाषा नहीं है, जो हिन्दी के साथ स्पर्धा कर सके। जिस राष्ट्र ने अपनी भाषा का अनादर किया है उस राष्ट्र के लोग अपनी राष्ट्रीयता खो बैठते हैं। हममें से अधिकांश लोगों की यह हालत हो गयी है। पृथ्वी पर हिन्दुस्तान ही एक ऐसा देश हैं, जहां मां-बाप अपने बच्चों के साथ मातृभाषा में न बोलकर विदेशी अंग्रेजी में बोलना और अपने बच्चों को अपनी मातृभाषा की बनिस्पत अंग्रेजी में लिखना पसंद करते हैं।

हजारों-लाखों लोग अंग्रेजी को अपनी सामान्य भाषा नहीं बना सकते और यदि यह संभव भी हो तो यह अत्यंत अवांछनीय है। इसका सीधा-सादा कारण यह है कि उच्च ज्ञान और तकनीकी ज्ञान अंग्रेजी के माध्यम से प्राप्त किये जाने से जनसाधारण तक इस तरह नहीं पहुंच सकता, जिस तरह वह उच्च वर्गों में प्रचलित होने पर किसी देशी भाषा के माध्यम से पहुंचता। उदाहरणार्थ, श्री जगदीश चन्द्र बसु की कृतियों को अंग्रेजी से गुजराती में अनुवादित करना, हकसले की कृतियों को अंग्रेजी से गुजराती में अनुवादित करने की अपेक्षा अधिक आसान है। अंग्रेजी की आज इज्जत न तो हमारे सम्मान को बढ़ाने वाली है और न वह लोकशाही के सच्चे जोश को पैदा करने में ही सहायक होती है। कुछ सौ अलमदारों और हाकिमें की सहूलियत

के लिए करोड़ों लोगों को एक परदेशी भाषा सीखनी पड़ती है, यह बेह्देपन की हद है।

अपने देशवासियों पर अंगेजी का मुलम्मा चढ़ा हुआ देखकर मुझे जितना दुख होता है उतना अन्य किसी वस्तु से नहीं । जब मैं भारतीयों को अपने भारतीय भाइयों के साथ विदेशी भाषा में बोलते देखता हूं तब मुझे बड़ी वेदना होती है । लोग अंगेजी पढ़ते हैं तो व्यापारी बुद्धि से और तथाकथित राजनीतिक फायदे के लिए ही पढ़ते हैं । मुझे यह नहीं बर्दाश्त होगा कि हिन्दुस्तान का एक भी आदमी अपनी मातृभाषा को भूल जाए, उसकी हंसी उड़ाए, उससे शरमाए या उसे ऐसा लगे कि वह अपने अच्छे-से-अच्छे विचार अपनी भाषा में नहीं रख सकता । इस विदेशी भाषा के माध्यम से बच्चों के दिमाग को शिथिल कर दिया है, उन्हें रट्टू और नकलची बना दिया है । विदेशी माध्यम ने हमारे बालकों को अपने ही घर में पूरा विदेशी बना दिया है । विदेशी माध्यम ने हमारे बालकों को अपने ही घर में पूरा विदेशी बना दिया है । विदेशी माध्यम ने हमारे देशी भाषाओं की प्रगति और विकास को रोक दिया है"।

गांधी जी का कहना था कि "अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो, तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम के जिरये दी जाने वाली लड़को और लड़कियों की शिक्षा बंद कर दूं और सारे शिक्षकों और प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरंत बदलवा दूं या उन्हें बर्खास्त कर दूं । मैं पाठ्य पुस्तकों की तैयारी का इंतजार नहीं करूंगा, वे तो माध्यम के परिवर्तन के पीछे-पीछे अपने आप चली आएंगी । यह एक ऐसी बुराई है, जिसका तुरंत इलाज होना चाहिए । हिन्दी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है । देश के नौजवानों पर एक विदेशी माध्यम थोप देने से उनकी प्रतिभा कुण्ठित हो रही है और इतिहास में इसे विदेशी शासन की बुराइयों में से सबसे बड़ी बुराई माना जाएगा । इसने राष्ट्र की शिक को घुन लगा दिया है । शिक्षा को अनावश्यक रूप से व्यय साध्य बना दिया है । यदि यह प्रक्रिया आगे भी जारी रही, तो ऐसे आसार दिखाई दे रहे हैं कि यह राष्ट्र की आत्मा का हनन कर देगी । इसलिए शिक्षित भारतीय जितनी जल्दी विदेशी माध्यम के भयंकर वशीकरण से बाहर निकल जाए, उतना ही उनका और जनता का लाभ होगा । दिक्षण भारत के नेता जब तक हिन्दी सीखने से इनकार करते रहेंगे, तब तक दिक्षण शेष भारत से अलग-थलग सा ही बना रहेगा ।

हिन्दुस्तान को छोड़कर आप दूसरे किसी भी आजाद गुलाम देश में चले जाइए, यहां जैसे स्थिति तो कहीं भी दिखाई न पड़ेगी । दक्षिण अफ्रीका जैसे नन्हे से देश में अंग्रेजी और डच भाषा का झगड़ा हुआ । आखिर समझौता हुआ और दोनों भाषाओं को बराबरी का स्थान दिया गया । बहाद्र डच लोग अपनी मातृभाषा छोड़ने को तैयार न थे । अगर स्वराज्य अंग्रेजी बोलने वाले भारतीयों का और उन्हीं के लिए होने वाला हो तो नि:संदेह अंग्रेजी ही राष्ट्रभाषा होगी । लेकिन अगर स्वराज्य करोड़ों भूखे मरने वालों, करोड़ों निरक्षरों, निरक्षर बहनों और दिलतों व आत्मजों का हो और इन सबके लिए होने वाला हो, तो हिन्दी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है । हिन्दी भाषी लोगों को दक्षिण की भाषा सीखने की आवश्यकता अवश्य ही अधिक है सारे हिन्दुस्तान में हिन्दी बोलने और समझने वालों की संख्या दक्षिण की भाषा बोलने वालों से दुग्नी है । प्रान्तीय भाषा अन्य भाषाओं के बदले में नहीं, बल्कि उनके अलावा एक प्रान्त का दूसरे प्रान्त से संबंध जोड़ने के लिए एक सर्वमान्य भाषा की आवश्यकता है । ऐसी भाषा तो हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही हो सकती है।

गांधी जी का कहना था कि "अगर अंग्रेजी ने यहां के लोगों की भाषाओं को निकाल न दिया होता, तो प्रान्तीय भाषाएं आज आश्चर्यजनक रूप से समृद्ध होतीं । विश्वविद्यालयों के अध्यापक अंग्रेजी में धाराप्रवाह बोल सकते हैं, लेकिन अपनी खुद की मातृभाषा में अपने विचारों को प्रकट नहीं कर सकते । मगर रूस को देखिए । रूस वालों ने राज्य क्रांति से भी पहले यह निश्चय कर लिया था कि वे अपनी पाठय-पुस्तके (विज्ञान को भी) रूसी भाषा में लिखवाएंगे । दरअसल इसी से लेनिन के लिए राज्य क्रांति का रास्ता तैयार हुआ । मैं भाषा पर इतना जोर इसलिए देता हूं कि राष्ट्रीय एकता हासिल करने का यह एक बहुत जबरदस्त साधन है और जितना दृढ़ आधार होगा, उतना ही प्रशस्त हमारी एकता होगी ।

प्रान्तीय भाषाओं को न्यायसंगत स्थान देने का समर्थन करते हुए उन्होंने कहा था कि, "हमारी इस झूठी अभारतीय शिक्षा से लाखों आदिमयों का दिन-दिन जो अधिकाधिक नुकसान हो रहा है, उसके प्रमाण मैं रोज ही पा रहा हूं । जो स्नातक मेरे आदरणीय साथी हैं, उन्हें जब अपने आंतरिक विचारों को व्यक्त करना पड़ता है तब वे खुद ही परेशान हो जाते हैं । वे तो अपने ही घरों में अजनबी बन गए हैं । जिस तरह हम अपने को लाचार समझते मालूम पड़ते हैं, उस तरह एक भी जापानी अपने को नहीं समझता । शिक्षा का माध्यम तो एकदम और हर हालत में बदला जाना चाहिए और प्रान्तीय भाषाओं को उनका न्यायसंगत स्थान मिलना चाहिए । यह जो दण्डनीय बरबादी रोज-ब-रोज हो रही है, इसके बजाय तो मैं अस्थायी रूप से अव्यवस्था हो जाना ही ज्यादा पसंद करूंगा । जब तक हम शिक्षित वर्ग इस प्रश्न के साथ खिलवाड़ करते रहेंगे तब तक

मुझे इस बात का बहुत भय है कि हम जिस स्वतंत्र और स्वस्थ भारत का स्वप्न देखे हैं, उसका निर्माण नहीं कर पायेंगे । हमें जीतोड़ प्रयत्न करके अपने बंधन से मुक्त होना चाहिए, चाहे वह शिक्षणात्मक हो या आर्थिक" ।

अंत में, आज भी महात्मा गांधी के हिन्दी संबंधी विचार प्रासंगिक हैं । अब भी अधिक कुछ नहीं बिगड़ा है यदि हम वास्तव में विदेशी भाषा से छुटकारा चाहते हैं, तो हमें गांधीजी द्वारा विभिन्न अवसरों पर राजभाषा हिन्दी पर दिए गए विचारों और सलाह को अमल करने की आवश्यकता है ताकि हम विश्व में अपनी एक अलग पहचान बना सकें और अपनी अमित छाप छोड़ सकें ।

3. महात्मा गांधी और ग्रामीण विकास

*डॉ. बृजमोहन **डॉ. विजय कुमार ***डॉ. अनुपम कृष्ण दीक्षित

महात्मा गाँधी को ग्रामीण विकास के सम्बन्ध में पहली बडी उपलब्धि 1918 में चम्पारन सत्याग्रह और खेडा सत्याग्रह में मिली। इसके अलावा खाद्य फसलों की बजाय, नकद पैसा देने वाली खाद्य फसलों की खेती वाले आन्दोलन भी महत्वपूर्ण रहे। महात्मा गाँधी ने जमींदारों के खिलाफ विरोध प्रदर्षन और हड़तालों का नेतृत्व किया, जिन्होंने अंग्रेजी सरकार के मार्गदर्षन में उस क्षेत्र के गरीब किसानों को अधिक क्षतिपूर्ति मंजूर करने तथा खेती पर नियन्त्रण, राजस्व में बढोत्तरी को रद्द करना तथा इसे संग्रहित करने वाले एक समझौते पर हस्ताक्षर किये। इस संघर्श के दौरान ही महात्मा गाँधी को जनता ने बापू पिता और महातमा (महान आतमा) के नाम से सम्बोधित किया। खेडा में सरदार पटेल ने अंग्रेजों के साथ विचार विमर्ष के लिए किसानों का नेतृत्व किया, जिसमें अंग्रेजों ने राजस्व संग्रहर्ण से मृक्ति देकर सभी कैदियों को रिहा कर दिया गया था। इसके परिणाम स्वरूप, महात्मा गाँधी की ख्याति देषभर में फैल गयी। महात्मा गाँधी ने यह भी सुझाव दिया कि सभी भारतीय अंग्रेजों द्वारा बनाये गये वस्त्रों की अपेक्षा हमारे अपने लोगों द्वारा हाथ से बनाई गई खादी पहनें। इसके अलावा महात्मा गाँधी ने स्वतत्रता आन्दोलन को सहयोग देने के लिए पुरूशों और महिलाओं को प्रतिदिन खादी के लिए सूत कातने में समय बिताने के लिए कहा।

ग्रामीण विकास का तात्पर्य है, कि लोगों का आर्थिक सुधार और बड़ा सामाजिक बदलाव दोनों ही हैं। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में लोगों की बढ़ी हुई भागीदारी, योजनाओं का विकेन्द्रीकरण, भूमि सुधारों को बेहतर तरीके से लागू करना और ऋण की आसान उपलब्धि करवाकर लोगों के जीवन को बेहतर बनाने का लक्ष्य होता है। प्रारम्भ में, विकास के लिए मुख्य जोर कृशि, उद्योग, संचार, षिक्षा, स्वास्थ्य और सम्बन्धित क्षेत्रों पर दिया गया था। बाद में यह समझने पर कि त्वरित विकास केवल तभी सम्भव है जब सरकारी प्रयासों के साथ-साथ पर्याप्त रूप से जमीनी स्तर पर लोगों की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भागीदारी हो। इन सभी पहलूओं को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण विकास विभाग द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में कई बड़े कार्यक्रम चलायें गये जैसे-रोजगार देने के लिए महात्मा गाँधी नेषनल रूरल एम्प्लायमेन्ट गारन्टी एक्ट (मनरेगा) , स्व-रोजगार और कौषल विकास के लिए नेषनल रूरल लाइवलीहुडस मिषन (एनआरएलएम), गरीबी रेखा से नीचे वाले परिवारों को आवास देने के लिए इन्दिरा आवास योजना (आईएवाई), बनाने के लिए प्रधानमंत्री सडक सडकें (पीएमजीएसवाई), सामाजिक पेंशन के लिए नेषनल सोषल असिस्टेंन्स प्रोग्राम (एनएसएपी), आदर्ष ग्रामों के लिए सांसद आदर्ष ग्राम योजना (एसएजीवाई), ग्रामीण विकास केन्द्रों के लिए ष्याम प्रसाद मुखर्जी रूर्बन मिषन योजना इत्यादि।

ग्रामीण विकास जहां एक ओर कृशि, पषुपालन और कुटीर उद्योगों के विकास पर निर्भर है, वहीं इन कार्यो के लिए आधारभूत संसाधनों की उपलब्धता तथा ग्रामीण रोजगार भी जरूरी है जिससे गांवों की निर्धनता दूर होकर उनका कायाकल्प हो सके। इस दृश्टि से स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ग्रामीण विकास के लिए सरकारी स्तर पर अनेक प्रयास किये गये। इस सम्बन्ध में गांवों के विकास के लिए

सरकार द्वारा जो बड़ी संख्या में परियोजनायें और कार्यक्रम अपनाये गये उनमें से प्रमुख परियोजनायें व कार्यक्रम इस प्रकार हैं जैसे - सामुदायिक विकास परियोजना (1952), ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्वरोजगारी प्रषिक्षण कार्यक्रम, (ट्रायसेम), औजार-किट आपूर्ति कार्यक्रम, जवाहर रोजगार कार्यक्रम, पंचायती राज, ग्रामीण जल आपूर्ति एवं स्वच्छता कार्यक्रम, बहुउद्देषीय परियोजनायें इत्यादि।

ग्रामीण विकास के लिए, पष्पालन में बकरी पालन सबसे अच्छा है, क्योंकि कम लागत व कम जगह में इसको आसानी से पाला जा सकता है। बकरी पालन में परिवार के हर तरह के लोगों का सहयोग मिल सकता है। अन्य कार्यों के साथ-साथ बकरी पालन आसानी से किया जा सकता है और आमदनी का अतिरिक्त साधन बन सकता है। इससे बेरोजगारी भी कम होती है। बकरी का दुध औशिध का कार्य करता है और इसके मांस को कोई भी किसी भी वर्ग का खा सकता है । भा.क्.अ.प.-केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान, मखद्म, फरह, मथ्रा (उ.प्र.) राश्ट्रीय प्रषिक्षण व प्रायोजित प्रषिक्षण, वैज्ञानिक बकरी पालन पर आयोजित करता है। अब बकरी पालन एक व्यवसायिक के रूप में उभर कर आ चुका है। अधिक जानकारी के लिए हैल्पलाइन नं. 0565-2763320 पर सम्पर्क कर सकते हैं इसके अलावा संस्थान की बेवसाइट www.cirg.res.in पर भी जा सकते हैं। बकरी को महात्मा गाँधी ने गरीब की गाय भी बताया है जो कि आज बकरी पालन उन्नति के मार्ग पर अग्रसरित है और आज बकरी पालन हर वर्ग का इंसान करने लगा है क्योंकि यह लाभकारी सिद्ध हो चुका है। अतः सभी ग्रामीण वासियों से अनुरोध है कि अपने जीवन स्तर को ऊँचा करने के लिए बकरी पालन जरूर करें।

4. <u>ग्राम नवरचना और विकास के लिए गाँधी विचार प्रेरित</u> <u>विकासपथ</u>

*डॉ.मयुरी फार्मर

सार

कई बार यह बात दोहराई गई है कि भारत का असली जीवन उसके गाँवों में है। यही ग्राम जीवन जहाँ सबसे बड़ी तादाद में देश के लोग अपना जीवन व्यतीत करते हैं वहीं जीवन की गुणवत्ता कई क्षेत्रों में काफी निम्न कक्षा की पाई जाती है। आजादी के इतने साल के बाद भी वह स्थित में ज्यादा सुधार नहीं आया। कुछ एक गाँव है जहाँ पर स्थिति विकासपूर्ण पाई जाती है लेकिन ऐसे गाँव बहुत कम है या ना के बराबर है। यहाँ एक सवाल खड़ा होता है – आजादी के सात दशक बाद भी हमारे ज्यादातर गाँव विकास की प्रक्रिया में क्यूं नहीं जुड़ पाए है?

महातमा गाँधी के विचार भारत की ग्राम विकास से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए आज भी इतने ही प्रस्तुत लगते हैं। ग्राम स्वराज में कई जगह पर इस बारे में उनका चिंतन और व्यवस्थापकीय प्रबंध प्रकट हुए है। उसी गाँधीयन विचारधारा से प्रेरित यहाँ कुछ एक समाधान ग्राम विकास के लिए प्रस्तुत किए गए है। ये विचार गाँधी विचार प्रेरित है लेकिन इन्हें देश की वर्तमान स्थिति के अनुसार देश के सामने खड़ी हुई समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सुलझाने का एक विनम्र प्रयास किया गया है और इन सब विचार की धरोहर एक दूसरे से जुड़ा सहकार है।

परिचय

भारत के शहर पिछले वर्षों में जितने बढ़े हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में उस तरह का विकास नहीं हुआ है। भारत की अर्थव्यवस्था मजबूत होने के लिए, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को उसी के साथ कदम बढ़ाने की जरूरत है। ग्रामीण क्षेत्र अभी भी कुपोषण, अशिक्षा, बेरोजगारी और बुनियादी ढाँचे की कमी जैसे स्कूल, कॉलेज, अस्पताल, स्वच्छता, आदि की समस्याओं से त्रस्त हैं। ग्रामीण विकास एक ऐसा विषय है जिसे समझना बहुत आसान है लेकिन इसे लागू करना कठिन है। सर्व समावेशी आर्थिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए, सरकार को तत्काल कृषि अर्थव्यवस्था को बदलने की जरूरत है ताकि अधिक से अधिक लोगों के निर्वाह का आधार खेती से बदल कर उन्हें अधिक पारिश्रमिक भूमिका दी जा सके।

गाँव विकास में सिम्मिलित किसी भी पहलु को हम अलग करके सोचेंगे तो विकास के जो इच्छित परिणाम प्राप्त करना चाहते है वह हांसिल नहीं होगा। विकास एक प्रक्रिया है जिसमें कई सारे पहलु शामिल है। किसी भी गाँव के विकास की भी प्रक्रिया वही रहेगी जो की देश की रहेगी, हाँ, इसमें उचित दिशा के बदलाव दाखिल करने है।

ग्राम स्वॉट विश्लेषण

ग्राम विकास के स्तम्भ जितने भी है जैसे की खेती, पशुपालन सहकार, वित्त व्यवस्था, शिक्षा एवं आरोग्य व्यवस्था और इनसे जुड़ी कई बाते – गाँव में इन सभी क्षेत्रों की वर्तमान स्थिति और उसके लिए जिम्मेदार कारण। आधुनिक व्यवस्थापन और सहकार के विभिन्न तरीकों में एक बात अभिप्रेत है-सबसे पहले आप अपनी खुद की स्थिति क्या है ठीक तरह से जान ले। क्यूंकि किसी भी दर्द के इलाज के लिए दर्द का मूलतः कारण जानना बहुत जरूरी है। गाँव का स्वॉट एनालिसिस गाँव के पास क्या क्या संसाधन है, उसके विवेकपूर्ण उपयोग से कौन-कौन सी बाधाएं आएंगी, गाँव की कमजोर कड़ियाँ इनका सामना कैसे करेंगी वे जानने की कोशिश वह विश्लेषण में की जाती है। गाँव की ताकत क्या है इन मसलो को सुलझाने के लिए.......

पंचायत सालाना जो अपना योजना बनाती है उसमें अग्रताक्रम देतें हुए कौन-कौन से मुद्दों पे पहले ध्यान देना चाहेगी यह निर्णय निर्धारण। कुछ एक महत्वपूर्ण प्रश्न के उत्तर किसी भी गाँव के विकास की प्रक्रिया को आरंभ करने से पहले किसी भी व्यवस्थापक को ढूंढ लेना जरूरी है।

महत्वपूर्ण ग्राम विकास के क्षेत्रों के लिए गाँधी विचार प्रेरित व्यवस्थापन

सिर्फ भारत नहीं पर समस्त मानवजाति के लिए गाँधी का चिंतन रहा की एक आम मनुष्य स्वावलम्बी बने। किसी को एक दूसरे से बोज ना बनना पड़े यह बात इसमें अभिप्रेत थी, साथ ही उन्होंने यह भी स्वीकारा था कि मनुष्य संपूर्ण रूप से स्वावलम्बी नहीं हो सकता। इस स्थिति में जब दूसरों को सेवा कि आवश्यकता खड़ी होती है वहाँ सहयोग जरूरी है जो कि पूरे समाज के लिए अच्छी अवलम्बित स्थिति प्रदान करता है। गाँव के विकास से जुड़े जितने भी पिछड़े क्षेत्र है वहां पर गाँव की जनता का सहयोग पाने की स्थिति क्या है यह जानना अत्यंत आवश्यक है।

इसी विचारधारा में आगे बढे तो यह समझ में आता है कि गाँव अपनी अवलम्बित जरूरतों के लिए एक दूसरे से सहकार की अपेक्षा रखे यह प्रार्थना उचित है। गाँव को जब यह समझ में आता है कि एक दूसरे के सामने होने से अच्छा एक दूसरे के साथ खड़े रहना है तब ही से गाँव कि काफी परेशानियों का हल आसान दिखाई देने लगेगा। सहकार विकास की क्रिया में जुड़े कई क्षेत्र जैसे की खेती में, पशुपालन में, वित्तीय प्रबंध में, ग्रामीण उद्योगों में, शिक्षा व्यवस्था में, पंचायत में, आरोग्य व्यवस्था में, भी लागू किया जा सकता है।

भारत जिसने एक जमाने में सत्य और अहिंसा कि ताकत से आजादी पाई, वहाँ पर आज सहकार या सहकारी व्यवस्था करने की कगार पे है। देश में आंकड़े बहुत है इस व्यवस्था पर इसका प्रबंध कहीं नहीं दिखाई देता। यदि यह आंकड़े सही अर्थ में पुनर्जीवित हो जाते है तो नए भारत का सूर्योदय बहुत नजदीक है।

गाँधीजी ने कई जगह इस बात का जिक्र किया है की इस दुनिया के जितने भी पहचाने गए संसाधन है उन सभी पर दुनिया के तमाम लोगो का अधिकार है। देश के लिए भी यह भावना प्रकट करते हुए उन्होंने बताया था की संसाधनों पर किसी एक का या कुछ एक का अधिकार ही करोड़ो लोगो की भूखे मरने वाली स्थिति की जिम्मेदार रहा है। उन्होंने इसका एक सर्वमान्य उपाय बताया था वो है सहकार और उससे जुड़ी विभिन्न गतिविधियाँ।

सहकार शब्द की जितनी चर्चा होती है उतना उसके ऊपर ठोस काम नहीं होता दिखाई देता। आज गाँवों में किसान मर रहे है, कर्जदार बन रहे है, अपनी ही पैदाइशों के लिए सही दाम नहीं पा रहे है। बड़े व्यापारी अपनी सिंडीकेट बनाकर किसानों की पैदाइशों का दाम गिरा सकते है पर किसान संगठित रूप में जुड़कर उनके सामने खड़े होकर अपने उत्पादों का सही या पोषणक्षम दाम नहीं पा सकते।

भारत में कुछ एक जिले में, राज्यों में सहकारी व्यवस्था का काफी प्रभाव देखने को मिलता है पर वह एकसमान रूप से पूरे भारत में फैला हो ऐसा नहीं पाया जाता। देश में लगभग 6 लाख से भी अधिक क्रेडिट और नॉन क्रेडिट रिजस्टर्ड सहकारी संस्थान है, जिसमे 25 करोड़ से भी ज्यादा सदस्य जुड़े है। पर उनमें से अधिकांश या तो बंद हालत में है या तो उनकी गतिविधियां छोटे किसान की जरूरते पूर्ण करने में असफल रही है। वर्तमान समय की आवश्यकता यह है की इन सहकारी संस्थानों को एकदम प्राथमिकता के आधार पर पुनर्जीवित किया जाय और पंचायत एवं ग्रामसेवक इसमें वैयिक्तक रूप से प्रतिभागी होकर इसकी गतिविधियों का धीरे-धीरे विस्तार शुरू करे

तािक गाँव, गाँव के लोग हर एक बात में स्वावलम्बी बने, लेिकन एक दूसरे पे अवलम्बित होते हुए। खेती क्षेत्र की सफलता का अवलम्बन पशुपालन, सिंचाई, वित्त और बाजार व्यवस्था एवं खेत उत्पादनों की मूल्य वृद्धि पर भी है। सहकारी संस्थानों में एक प्रतिष्ठित नाम 'अमूल' भी है जिसकी सफलता की खूब सारी गाथाएँ है। इन गाथाओं से प्रेरित होकर वही व्यवस्था ग्राम विकास के दूसरे क्षेत्रों में भी दाखिल करने की बड़ी आवश्यकता है।

गाँवों को पोषक या टिकाऊ व्यवस्था वही है जहाँ खेती से जुड़े सभी क्षेत्रों का विस्तार से अध्ययन किया जाए और जरूरी बदलाव आए। जैसे की गाँधीजी की परिकल्पना तो पशुपालन क्षेत्र के मूलतः सहकारीकरण में थी। उन्होंने बताया की किसान अपने घर में जानवर रखे उससे अच्छा है की गाँव की या पंचायत की सहकारी पशुपालन व्यवस्था के अंतर्गत सभी पशुओं को एक साथ रखा जाये, जिससे उनके निभाने की जिम्मेदारी भी बट जाएगी, जानवरों के पालन के लिए उसमें जरूरी तकनीकी हस्तक्षेप के लिए भी सहकारी संगठन महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। और घरों में इस वजह से फैलती गंदगी, बीमारियों से भी छुटकारा मिल सकेगा।

यही ख्याल खेती के लिए भी गाँधीजी ने दिया है जो आज की तारीख में छोटे किसानों के लिए आशीर्वाद रूप बन पायेगा। छोटे किसान जिनके पास जमीन कम है वह अपनी जमीनों को इकठ्टा करके उस पर सहकारी उद्यम से जो भी पैदावार होगी उसे बाँट लेंगे। आज के समय में ऐसे छोटे सहकारी समूह, जिसमें 15;20 किसानों को जोड़ा जाय, और सहकारी रूप से कृषि व्यवस्था के प्रयोग करने की बड़ी आवश्यकता है। यही व्यवस्था भविष्य में किसानों के लिए समृद्धि लाएगी, उनकी मेहनत बचाएगी, पानी बचाएगी, ग्रामीण संसाधनों को सवारेगी, और नए नए रोजगारी के क्षेत्र खोलेगी कृषि और उद्योगों के बीच की कड़ी जो उद्योगों के एकाधिकार की वजह से टूट रही है वह कृषि उत्पादनों के मूल्य वृद्धि के रूप में पुनर्जीवित होगी।

इन सभी के लिए जरूरी वित्तीय व्यवस्था भी सहकारी रूप से ही हांसिल होगी। गाँव खुद एक बचत बैंक चलाए या छोटे-छोटे समूह बनाकर चलाए जहाँ लोगों की छोटी वित्तीय जरूरते आसानी से पूरी हो जाएगी। पिछले सालों से भारत सरकार ने स्वयं की सहायता का विचार रोजाना एक रूपया बचाने पे रखा था। कई जगह इसके काफी सफल परिणाम मिले है, शुरूआती जमा पूँजी के छोटे आंकड़े आगे जाके बड़ी मात्रा के वित्तीय लेनदेन में बदलेंगे। लम्बे समय के कर्ज की जरूरते सरकार द्वारा पूरी की जा सकती है, उसका ढांचा तो काम कर ही रहा है।

देश में शिक्षा का आज माहौल यह बना है की जिन क्षेत्रों की जरूरते नहीं है या कम है उसके पाठ्यक्रम चलाये जा रहे है। जिसकी वजह से किसी भी कार्य क्षेत्र में मांग और आपूर्ति की स्थिति का संतुलन नहीं बन पाता। गाँवों की सामाजिक एवं आर्थिक जरूरतों और व्यवसायों को पोषक कुछ एक पाठ्यक्रम जो गाँवों की विशेष जरूरतों के पोषक रहेंगे, जिनकी सहायता से विभिन्न व्यवसायी लोग अपने व्यवसायों का विस्तार करेंगे ऐसे पाठ्यक्रम देश के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत विश्वविद्यालयों में वहां की जमीनी हकीकतों के ध्यान में रखते हुए बनाये जाए और चलाये जाए तािक ऐसे योग्यताप्राप्त लोग गाँवों की विकास प्रक्रिया में अपना खास योगदान दे सके। वे अपने

क्षेत्र विस्तार के विकास के लिए लागू की जा सकती गाँवों के विकास की व्यूह रचना से वाकिफ होंगे और विकास की एक-दूसरे पे अवलम्बित कडियों को भी बखूबी समझते होंगे। भारत के 799 विश्वविद्यालयों से जुड़े 50,000 से भी ज्यादा स्थानिक कॉलेज या शिक्षा संस्थान से ऐसे पाठ्यक्रम की रचना करके लागू करने की उम्मीद की जा सकती है।

निष्कर्ष

गाँवों का टिकाऊ विकास केवल एक परिकल्पना नहीं है। हासिल हो सके, साकार हो सके ऐसा विजन जो काफी हष्टाओं ने देखा है, उसे हकीकत में बदलने की भी कोशिश की है पर काफी कम लोगों को सफलता मिली है। महात्मा गाँधीजी की देश के विकास की कल्पना में एक खास शब्द था- 'स्वराज' जिसके अर्थ में सिर्फ विदेशियों की चुंगल से आजादी की इच्छा नहीं थी, पर हर एक आदमी राष्ट्र की और से अपने आप को मिले हुए अधिकार और फर्ज दोनों साथ और समान तरीके से निभाए यह अपेक्षित है। उनका चिंतन और प्रयास हमेशा से ही भारत के गाँवों की उस समय की स्थिति बदलने के लिए रहा था। समय बदल गया, विकास नाम पर कुछ एक सुविधाएं भी आ गयी, न सिर्फ शहरों में पर गाँवों में भी आ गयी। पर वह विकास टिक नहीं पाया, आज गाँव खाली हो रहे है शहरों की ओर बढ़ रहे है। क्या ग्राम विकास के नाम पे हमने यह परिणाम चाहा था? गाँवों में भी वही प्राथमिक सुविधाएं होनी चाहिए जो शहरों के पास है तभी शायद गाँवों का अस्तित्व बना रहेगा।

गाँधीजी ने विकास को कुछ इस तरह से देखा था — विकास जो हमेशा टिका रहे, जिसमें उपलब्ध विकास के संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग हो, वर्तमान पीढ़ी अपने पास अभी उपलब्ध संसाधनों को इस तरह से इस्तेमाल करे की आने वाली पीढ़ियों के लिए भी वे सलामत रहे। कन्ति प्रवर्त्तमान समय में विकास की इस परिभाषा (जिसे इस दुनिया के कई राष्ट्रों ने अपनाया भी है) को लक्ष्यािकंत सिद्धियां हांसिल करने के लिए तोड़ा मरोड़ा गया है। समय अब भी है, गाँधी विचार प्रेरित व्यवस्थापकीय विचारधारा जिसमें एक तरफ गाँधी के सर्व पोषक विचार और आधुनिक प्रबंध के व्यूहात्मक आयोजन की मदद से भारत के हर एक गाँव को सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स को पूरा करते हुए विकसित बनाया जा सकता है। यह विकास सिदयों तक टिकेगा। मनुष्य श्रम और संसाधनों का इससे अच्छा उपयोग एवं बचाव और क्या होगा?

<u>संदर्भ</u>

ग्राम स्वराज – महात्मा गाँधी, संपादक हरिप्रसाद व्यास, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद.

5. महात्मा गांधी और हिन्दी

*डॉ. बृजमोहन **डॉ. विजय कुमार ***डॉ. अनुपम कृष्ण दीक्षित

महात्मा गांधी ने स्वतन्त्रता आन्दोलन में आने के पहले पूरे देष का भ्रमण किया और उनको ऐसा महसूस हुआ कि हिन्दी भाशा ही केवल पूरे देष को जोड़ सकती है। इसके बाद उन्होंने हिन्दी को राश्ट्रभाशा बनाने की सिफारिष की। आजादी आन्दोलन के सबसे बड़े नेता महात्मा गांधी भले ही गुजराती भाशी थे, लेकिन हिन्दी को आगे बढ़ाने में उनका बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान रहा, और स्वयं भी उन्होंने हिन्दी को बड़ी लग्न से सीखी। आजादी के बाद जब देष का बंटवारा हुआ, तब किसी विदेषी पत्रकार ने महात्मा गांधी से दुनियां को सन्देष दने की बात कही, तो उन्होंने कहा कि दुनियां वालों को कह दो कि महात्मा गांधी को अंग्रेजी नहीं आती। इससे यह स्पश्ट होता है कि महात्मा गांधी ने पूर्ण राश्ट्रीय आन्दोलन को हिन्दी से जोड़ दिया था। इसके साथ ही अन्य भाशाओं के नेताओं को भी हिन्दी की षरण में आना पड़ा और इससे देष की एकता मजबूत हुई।

महात्मा गांधी के अधिकतर भाशण गुजराती टोन की हिन्दी में देखने को मिलते हैं। हिन्दी के किव व लेखकों के साथ भी उनके सम्बन्ध अच्छे रहे। महात्मा गांधी के साथ रहने वाले सभी गैर हिन्दी भाशी,

हिन्दी को भाशा ही नहीं बल्कि देष को जोड़ने की कड़ी मानते थे। उपन्यास सम्राट श्री प्रेमचन्द्रजी ने स्वीकार किया था कि उनका हिन्दी और राश्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ना, महात्मा गांधी के कारण ही सम्भव हुआ था। महात्मा गांधी जो हिन्दी लिखते और बोलते थे, उसे वे हिन्दी नहीं, बल्कि हिन्दुस्तानी कहते थे। महात्मा गांधी ने हिन्दी को एक सम्पर्क भाशा के रूप में प्रयोग किया। उनका कथन यह बहुत प्रसिद्ध है कि श्'राश्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना' देष की उन्नति के लिए आवष्यक है।

महात्मा गांधी केवल राश्ट्रीय नेता ही नहीं थे, बल्कि अपने समय के एक अच्छे पत्रकार भी थे, हिन्दी, अंग्रेजी और गुजराती भाशाओं में उन्होंने कई अखवार भी निकाले थे। हिन्दी में उन्होंने दो अखवार निकाले-नवजीवन और हरिजन सेवक। महात्मा गांधी अधिकतर अपने पत्रों का जबाव हिन्दी में देना ही पसन्द करते थे। श्री षि भूशण द्विवेदी का मानना था कि अगर हिन्दी राश्ट्रभाशा बन सकी तो उसमें महात्मा गांधी का बड़ा योगदान होगा। सभी देषवासी भी इस बात को माने। आगे ए एम यू के प्रो. अब्दुल अलीम ने कहा था, कि महात्मा गांधी ने हिन्दी को लेकर काफी चिन्तन किया था। उन्होंने पूरे देष को एक सूत्र में पिरोने का सपना देखा और उनके षिश्य श्री विनोबा भावे और काका कालेलकर ने भी भाशा और लिपि को सुद्ढ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। श्री दर्षन पाण्डेय ने कहा था, कि महात्मा गांधी की विचार धारा हिन्दी साहित्य की सभी विद्याओं में है।

महात्मा गांधी के किठन परिश्रम व योगदान से आज हिन्दी भाशा देष के कोने-कोने में बोली जाती है। और यह एक अन्तराश्ट्रीय भाशा का भी रूप लगभग ले चुकी है। और इससे रोजगार भी लोगों को एक जगह से दूसरी जगह मिला है। और राश्ट्र एकता में भी इसका योगदान बढ़ा है। भा.कृ.अ.प.-केन्द्रीय बकरी अनुसंधान संस्थान , फरह, मथुरा (5.प्र.) में एक साल में छः (06) राश्ट्रीय प्रषिक्षण वैज्ञानिक बकरी पालन पर आयोजित किये जाते हैं। जिसमें लगभग 20 प्रदेषों से प्रषिक्षणार्थी षामिल होते हैं। यह प्रषिक्षण लगभग हिन्दी भाशा में ही आयोजित किया जाता है। इस तरह यह संस्थान भी हिन्दी को आगे बढ़ाने में अपना काफी योगदान दे रहा है। कृपया इस तरफ सभी विभाग हिन्दी को आगे बढ़ाने में अपना योगदान प्रदान करें, जिससे और भी हिन्दी मजबूती पकड़ सके, और राश्ट्र एकता कायम रहे।

6. महात्मा गांधी के दृष्टिकोण में ग्रामीण जीवन शैली, ग्रामीण अर्थव्यवस्था और ग्रामीण चिकित्सा प्रबंधन

* आरसी प्रसाद झा

ग्राम से तात्पर्य ऐसे क्षेत्रों से लिया जा सकता है जो क्षेत्र नगर निगम, नगरपालिका, नोटिफाइड एरिया, सैनिक छावनी और शहरी क्षेत्र में नहीं आते हैं। वर्तमान अध्ययन का उद्येष्य 'महात्मा गांधी के दृष्टिकोण में ग्रामीण जीवन शैली. अर्थव्यवस्था व चिकित्सा प्रबंधन' को जानना है। ग्रामीण विकास में किसान कारीगर, भूमिहीन कृषक, आदि सभी सिम्मिलित हैं। महात्मा गांधी का कहना है कि ग्रामीण विकास से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन एवं असहाय लोगों को आर्थिक. सामाजिक एवं पैक्षिक स्तर से उपर उठाकर ग्राम को एक स्वावलंबी गणतंत्र बनाना है। महात्मा गांधी ने ग्रामीणों को कृषि, पष्पालन, लघ् व कुटीर उद्योग स्थापित करने व इसी के माध्यम से आत्मनिर्भर होने के लिए कहा। महात्मा गांधी चाहते थे कि प्रत्येक गांव में वयस्कों, बच्चों, महिला, आदि सभी के लिए रंगमंच, मनोरंजन स्थल, खेल के मैदान, थिएटर, स्कूल, सार्वजनिक हॉल, कुंआ, टैंक, पूद्ध पेयजल, आदि सुनिष्चित हो। महात्मा गांधी का सोचना था कि व्यक्ति स्वदेषी व स्थानीय सामानों का क्रय-विक्रय करे और मषीन से प्राप्त उत्पाद व दर के स्थानों (गैर-स्वदेषी व विदेषी सामान सहित) द्वारा निर्मित उत्पाद का परित्याग करे भले ही वह सामान सस्ता क्यों न हो।

महात्मा गांधी के अनुसार, कोई भी ग्रामीण न तो नषीले पदार्थ की खेती करेंगे, न खायेंगे और न ही इसका व्यापार करेंगे। गांव में किसी भी आधार पर असमानता, भेदभाव व छूआछूत नहीं होकर समानता व कमजोर वर्ग के हित के लिए होना चाहिए। महात्मा गांधी के विचार में स्वदेषी निर्मित सामान बेराजगारी को दूर करने व ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में सहायक है। महात्मा गांधी ने चिकित्सा प्रबंधन के बारे में बताया है कि ग्रामीण क्षेत्र में चिकित्सा सुविधा का विस्तार हो और यह निःषुल्क हो। महात्मा गांधी का कहना था कि ग्रामवासी आसपास की जड़ीबूटी, घरेलू (प्राकृतिक) चिकित्सा, विष्वास व धैर्य (रामनाम) से बीमारियों का उपचार करें।

मुख्य शब्द: अर्थव्यवस्था, गांधी, ग्रामीण, घरेलू, प्राकृतिक चिकित्सा

ग्राम से तात्पर्य ऐसे क्षेत्रों से लिया जा सकता है जो क्षेत्र नगर निगम, नगरपालिका, नोटिफाइड एरिया, सैनिक छावनी, शहरी क्षेत्र में नहीं आते हों। इसी प्रकार, शहर के निकट अवस्थित ग्रामीण क्षेत्र भी विकास में आगे रहते हैं क्योंकि यहां शहर की चकाचैंध जिंदगी इस क्षेत्रों को सीध प्रभावित करती है। अतः इस आधार पर यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि ऐसे क्षेत्रों को ग्राम या गांव नहीं माना जाए। गांव या ग्राम ऐसे क्षेत्रों को माना जा सकता है जहां शहरी दुनिया का प्रभाव न पड़ता हो। रॉबर्ट चैम्बर्स ने बताया है कि ग्रामीण विकास का तात्पर्य जनसंख्या के उस विशेष वर्ग के विकास करने की रणनीति है जिसमें गरीब ग्रामीण पुरूष, बच्चे व महिलायें षामिल होते हैं। इनकी इच्छा व जरूरतों को पूरा करना हैं। इस श्रेणी में ग्रामीण किसान कारीगर, भूमिहीन कृषक, आदि सम्मिलित हैं जो कि अपने जीवन-यापन हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे हैं। उमा लैली ने ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीण लोगों के जीवन में सुधार और उनके विकास

के लिए मुख्यधारा से जोड़ने की बात की। आर. एन. आजाद का मानना है कि ग्रामीण क्षेत्र में विकास हेतु आर्थिक विकास पर जोर देना होगा और इसके लिए लघु व कुटीर उद्योगों का विकास तथा विपणन पर ध्यान देने की आवश्यकता है (पंत, 2011)।

ग्रामीण विकास प्रक्रियाओं में देश के ग्रामीण गरीबों को सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जीवन में एकीकृत करने की बात की जाती है। ग्रामीण विकास के लिए प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन के अधिकतम उपयोग किए जा सकते हैं। ग्रामीण विकास के लिए सर्वागीण ग्रामीण सेवायें और ग्रामीण सुविधाओं के विस्तार की आवश्यकता है।

अतः उपरोक्त साहित्य के आधार पर वर्तमान अध्ययन का उद्येष्य 'महात्मा गांधी के दृष्टिकोण में ग्रामीण जीवन शैली, ग्रामीण अर्थव्यवस्था व ग्रामीण चिकित्सा प्रबंधन' को जानना है।

महात्मा गांधी के अनुसार, ग्रामीण विकास से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन एवं असहाय लोगों को आर्थिक, सामाजिक एवं षैक्षिक स्तर से उपर उठाकर ग्राम को एक स्वावलंबी गणतंत्र बनाना है। महात्मा गांधी के जीवनकाल में लगभग 7 लाख गांव थे (प्रभु एवं राव, 1994; गांधी, 1954)। इसीलिए महात्मा गांधी कहते थे कि भारत वस्तुतः अपने सात लाख गावों में बसता है (प्रभु एवं राव, 1994)। उनके समय में शहर कुछ गिने-चुने थे व ये बहुत दूर थे। लेकिन, गांवे पास-पास में थे। इसीलिए उनका मूल बिन्दु ग्रामीण परिवेश रहा है।

महातमा गांधी ने बताया है कि भारत के कई हिस्सों में ग्रामवासी (ग्रामीण) रहते हैं। शहर से अधिक गांव हैं व जनसंख्यात्मक रूप से ग्रामीण जनसंख्या अधिक है। वे शहर और गांव के मध्य बढ रही सामाजिक असुरक्षा और दो वर्गों के बीच उगल रही जहर की खाई को कम करना चाहते थे। ग्रामीण विकास के लिए सभी को षिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली, आवास, रोजगार, आदि दिए जाने की आवश्यकता है। ग्रामीणों के लिए मिटटी, पानी, हवा, जंगल, आदि प्राकृतिक संसाधनों को ग्रामीणों तक पहुंचाया जाना चाहिए। ग्रामीण वर्ग के निर्धन पुरूष, महिला एवं बच्चों में उत्पादन क्षमता, योग्यता एवं उद्यमषीलता को विकसित करने की आवश्यकता हैं। अतः ग्रामीण विकास का उद्येष्य ग्रामीण अंचलों का सर्वांगीण विकास करना है न कि किसी एक पर जोर देना है और अन्य को अनदेखा करना है। महात्मा गांधी (1954) ने बताया है कि 'आज हमारे गांव उतने ही दिवालिया हैं जितने हम खुद हैं।' ग्रामीण विकास में कृषि, उद्योग व सेवा निहित हैं। महात्मा गांधी (1959) ने ग्रामीण विकास के लिए आर्थिक पूनर्गठन की बात की। महात्मा गांधी का कहना था कि जो भी ज्ञान की आवश्यकता है वह अन्यों की तुलना में इन ग्रामीणों में अधिक है लेकिन ये सीधे-सादे. सरल व सादगी जीवन जीने के कारण अन्य नहीं जान पाते हैं। ग्रामीण लोगों में ज्ञान की प्रचुर मात्रा है (गांधी, 1954)। महात्मा गांधी (1976अ) ने बताया है कि हमें अपने गांवों के लिए बेहतर सड़क, बेहतर स्वच्छता और बेहतर पेयजल आपूर्ति की आवश्यकता है। गांधीजी (1933) के अनुसार, मानव के लिए शारीरिक श्रम किया जाना आवश्यकता है। यह कार्य खेत में किया जा सकता है या नहीं तो खेती के बदले दूसरा मेहनत कर जैसे, कताई, बुनाई, बढईगिरी, लोहारी आदि कार्य कर किया जा सकता है। महात्मा गांधी का सपना था कि प्रत्येक गांव का अपना जल संस्थान हो जो कि स्वच्छ जल की आपूर्ति सुनिष्चित करे। इसकी व्यवस्था

नियंत्रित कुंओं या तालाबों से की जा सकती है। ग्रामवासियों को अपने कौशल में इतनी वृद्धि कर लेनी चाहिए कि उनकी द्वारा तैयार की गई चीजें बाहर जाते ही हाथों-हाथ बिक जायें (प्रभु एवं राव, 1994)।

महात्मा गांधी ने बेरोजगारी को सामाजिक अपराध की श्रेणी में रखा है। उन्होंने बताया है कि किसी स्वस्थ समाज के अंदर चंद व्यक्तियों के पास धन संग्रह होना और लाखों लोगों का बेकार होना सबसे बडा सामाजिक अपराध व रोग है। वैसे आजादी के लगभग 70 वर्ष के बाद भारत में बहुत परिवर्तन आया है। अब भारत ने गौरवशाली स्थान बनाया है। आज भारत की अर्थव्यवस्था तेजी से बढ रही है। इसके बावजूद आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी एक विकट समस्या के रूप में विद्यमान है। देश की अर्थव्यवस्था में गांवों के महत्च को देखते हए उन्हें विकास की मुख्य धारा में शामिल करने की आवश्यकता है। इसके लिए गांवों में रोजगार के अवसरों के विकास व विस्तार की आवश्यकता है। वास्तव में शहर की तुलना में ग्रामीण विकास पर कम ध्यान दिया जाता है। ग्रामीण विकास को स्चारू रूप से मुख्य धारा में लाने के लिए ग्रामीण रोजगार सुजन व ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता हैं। आज भी भारत की संपूर्ण जनसंख्या में लगभग 70 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते है। अतः इनके विकास के बिना राष्ट्र का विकास संभव नहीं है। देश की आजादी के समय महापुरूषों (महात्मा गांधी सहित) ने ग्रामीण समस्याओं को समझा और इसे दूर करने के लिए कई आंदोलन, समझौता व संधि भी किया था। गांधी युग में ग्रामीण विकास के समर्थन व किसानों पर बढती हुई मालगुजारी का विरोध होता रहता था। आज भी किसानों की समस्यायें गंभीर स्थिति में हैं जिसका परिणाम फसल का नहीं होना, सूखा, कर्ज और अंत में किसानों की आत्महत्या देखी जा सकती है। ग्रामीण व किसान की समस्याओं के आधार पर रविन्द्रनाथ टैगोर ने भी ग्रामीण सुधार कार्यक्रम की शुरूआत की थी। ग्रामीण समस्या व ग्रामीण आवश्यकता को देखते हुए ग्रामीण विकास मंत्रालय का गठन हुआ जो कि ग्रामीण लोगों के प्रगति और विकास पर जोर देता है। ग्रामीण विकास का एक मुख्य उद्येश्य गरीबी उन्मूलन, भूखमरी, आर्थिक विषमता को दूर करने के लिए रोजगार पर जोर दिए जाने की आवश्यकता है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी विधेयक ग्रामीणों को 100 दिन रोजगार देकर आंषिक बेरोजगारी दूर कर रही है।

महातमा गांधी (1976) ने एक बार देखा कि एक गांव के निवासियों के लिए पीने के पानी के दो टैंक मिले, जो कि एक बडा और एक छोटा था। यह पानी दो विभिन्न समुदायों के लिए था। ग्रामीण स्तर पर जल वितरण को लेकर महात्मा गांधी असंतुष्ट हुए और बताया कि पानी को छूने, पीने और जल वितरण के लिए किसी को वंचित नहीं किया जाना चाहिए। वे ऐसे जल व्यवस्था को बहिष्कार करना चाहते थे। गांव में हरिजनों द्वारा आम कुंआ के उपयोग के लिए रूढिवादी विरोध अभी भी कई गांवों व शहरों में जारी है। महात्मा गांधी (1976अ) ने बताया है कि कॉर्पोरेट जीवन की पहली आवष्यक शर्त शहर का जीवन है। शहर के निवासियों को पानी की एक पूरी तरह से स्वच्छ आपूर्ति की गारंटी है और इसके आवास पूरी तरह से साफ और मीठे हैं। गांधी जी ने एक गांव में देखा कि एक गांव के लोगों द्वारा पीने के पानी की टंकी पूरे दिन प्रदूषण के खिलाफ बनाई गई थी। गांधी जी के अनुसार, नहाने की टैंकों में पीने के पानी की आपूर्ति करनेवाले टैंकों से अलग होना चाहिए। अतः गांधीजी ने बताया है कि शहर और गांव एवं गांव-गांव में जलापूर्ति व गुणवत्ता को लेकर असमानता, भेदभाव व छूआछूत दिखता है। महात्मा गांधी का कहना था कि गांव में किसी भी आधार पर असमानता, भेदभाव व छूआछूत नहीं होकर समानता होनी चाहिए। उन्होंने कमजोर वर्ग के उत्थान के लिए हित व विशेष कल्याण की बात कही।

महात्मा गांधी (1976) और गांधीवादी विचारक 'प्रभू एवं राव' (1994) ने लगभग सौ गांवों में देखा कि स्थानीय लोगों को खाने के लिए न तो अन्न (धान) था और न ही खेती करने के लिए पैसा। एक बार तो उन्होंने गांव में 9 लाख की फसल बेबीद होते देखा था। गांधीवादी विचारक 'बंग' (2006) ने बताया है कि एक बार एक गांव में सात दिन तक बिजली, पेयजल, सब्जी, टेलीफोन, डाकघर, आदि सभी बंद हो गए। ग्रामीण क्षेत्र की समस्या-समाधान के बारे में गांधी विचारक 'बोस' (1950) ने बताया है कि एक बार गांवों में जलकुंभी हटाने, सड़कों की मरम्मत, गांव के पुननिर्माण, अपने भूखंडों को सीधा करने व जमीन पर निर्माण कार्य हेत् फैसला लिया गया था। संभवतः इस लेखन के समय कुछ समस्यायें गांवों में देखी गई होंगी। महात्मा गांधी (1968अ) के अनूसार, शहर और गांवों के निवासियों बीच खाद्य पदार्थ/भोजन, पेय जल, कपड़े, प्रकाश, रहन-सहन, आवास/रहने के स्थल के आधार पर समानता होनी चाहिए। आज ग्रामीण लोगों को अपने जीवन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए उत्पादन करने में सक्षम होना चाहिए (गांधी, 1968ब)। गांधी (1967), गांधीवादी विचारक 'प्रभ् एवं राव' (1967) व 'बोस' (1950) ने अपने पुस्तक में बताया है कि हमें उन ग्रामीणों के साथ अपनी पहचान बनानी चाहिए जो अपनी पीठ के बल ये किसान व ग्रामीण गर्म सूरज के नीचे कार्य करते हैं और ये ग्रामीण पानी को सभी कार्य, जैसे-स्वयं व जानवन को पीने, कपडे व बर्तन धोने आदि में प्रयोग लेते हैं। अतः स्पष्ट है कि ग्रामीणों

व किसानों की स्थिति दयनीय है और इनकी स्थिति को सुदृढ करने के लिए सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है।

महात्मा गांधी (1959) ने बताया है कि ग्रामीण क्षेत्र में भूमि कानून सही नहीं है (गांधी, 1948) और इसमें संषोधन की आवश्यकता है। महात्मा गांधी (1968ब) ने यह भी उल्लेख किया है कि शहर में जल कर ली जाती है। उनका कहना था कि न तो भूमि कर और न ही पानी कर ही लिया जाना चाहिए। उनका कहना है कि करदाता के नाराजगी होने पर कर लेना उचित नहीं है।

महात्मा गांधी (1968ब) ने प्रत्येक ग्राम के लिए स्थानीय स्वषासन की बात की। उन्होंने बताया कि प्रत्येक पंचायत अपने गांव में उगाए जानेवाले खाद्य पदार्थों में वृद्धि कराए। व्यक्ति अपने गांव और उसके निवासियों की स्वच्छता को देखना चाहिए। महात्मा गांधी ग्राम को अच्छा तब मानते हैं जब ग्राम में ग्रामोद्योग केन्द्र अधिक से अधिक हों, जहां अनपढ नहीं हों, सड़कें साफ हों, निकासी के लिए निष्चित जगह हो, कुंए साफ-सुथरा हों, विभिन्न समुदायों के मध्य सामंजस्य हों, अस्पृष्यता अनुपस्थित हो, प्रत्येक व्यक्ति को गाय का दूध व घी मिलता हो, बिना कामधंधा का कोई न हो अर्थात कोई बैठा न हो व आपस में झगडा न हो और चोरी न करता हो (गांधी, 1941)।

महातमा गांधी ने आदर्श गांव निर्माण के लिए स्वराज पर पूर्ण बल दिया। उनके अनुसार, गांवों के लोगों में आपस में अन्योनाश्रित संबंध व एक दूसरे पर निर्भरता की आवश्यकता है। हर गांव किसी दूसरे पर निर्भर नहीं होकर स्वतंत्र रूप से खाद्य फसल और कपास उगायें और इन्हीं से कपड़ा बनायें।

वे प्रत्येक गांव में षुद्ध जलापूर्ति हेतु वाटरवक्रस चाहते थे। वे जलापूर्ति हेतु कुंओं, टैंकों, आदि को भी सही बताते थे (गांधी, 1967)। उन्होंने जानवरों के लिए निष्चित स्थान रखने के लिए बताया। वे चाहते थे कि प्रत्येक गांव में वयस्कों व बच्चों के लिए रंगमंच, मनोरंजन स्थल, खेल के मैदान, थिएटर, स्कूल, सार्वजनिक हॉल, कुंआ, टैंक, षुद्ध पेयजल, आदि हो (गांधी, 1967; गांधी, 1962; बोस, 1950)।

महात्मा गांधी ने एक बार बताया कि 'हमें उन ग्रामीणों के साथ अपनी पहचान बनानी होगी जो तेज धूप में काम करते हैं, काम से उनके पीठ मुड़ होते हैं व वे (ग्रामीण) पानी को सभी कार्यों, जैसे-पीने, स्नान करने, बर्तन धोने व मवेषी के पिलाने में प्रयोग में लेते हैं। इसीलिए वे जनप्रतिनिधि को ग्रामीण क्षेत्रों के लिए निष्चित रूप से कुछ सकारात्मक कदम उठाने व ध्यान देने के लिए कहे' (गांधी, 1962)।

महात्मा गांधी का कहना था कि जब हम अपनी आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी पड़ोसी को छोड़कर किसी और के पास जाते हैं तो मानव जाति के एक पवित्र नियम को तोड़ते हैं। उन्होंने उदाहरण देकर समझाया भी है कि यदि आपके स्थल के आसपास संबंधित सामान उपलब्ध है या वहीं उत्पाद होता है तो बाहरी लोगों से सामान खरीदना स्वदेषी के खिलाफ दोषपूर्ण विचार को जन्म देता है (प्रभु एवं

राव, 1994)। अतः गांधीजी के दृष्टिकोण में स्थानीय वस्तुओं का प्रयोग करें व क्रय-विक्रय भी स्थानीय लोगों से करें। गांधी जी का मानना था कि बाहर के व्यापारी व मषीन से निर्मित उत्पाद से बचें भले ही वह सस्ता क्यों न हो क्योंकि ऐसा नहीं करने से स्थानीय व ग्रामीण बेरोजगारी बढेगी।

महात्मा गांधी का कहना था कि आदर्श गांव के लिए स्वच्छता, हवादार घर/कुटिया (कॉटेज) और पर्याप्त प्रकाश एक पैमाना हो सकता है। गांव की गलियां और सड़क धूलमुक्त होनी चाहिए। सभी ग्रामीणों की आवष्यकताुनसार कुंए सुलभ होनी चाहिए। सभी घरों में उनके धर्म के अनुसार पूजास्थल, आम बैठक कक्ष, मवेषी के लिए जगह, आदि होनी चाहिए। उन्होंने बताया है कि प्रत्येक गांव में सहकारी डेयरी, प्राथमिक विद्यालय, औद्योगिक षिक्षण संस्थान होनी चाहिए। उन्होंने प्रत्येक गांव में आपसी विवादों के निपटारे के लिए पंचायतें होने की बात रखे। उनके अनुसार, एक समुचित ग्राम अपने अनाज और सिंच्जियों का उत्पादन स्वयं करेगा और खुद के लिए खादी कातेगा (हरिजन, 1937)। गांधीजी (1949) ने ग्रामीण समस्याओं के समाधान के लिए उदाहरण दिया है कि पानी के लिए समुद्र के पास जाने की जरूरत नहीं है, बिल्क गांव में ही उपलब्ध हो व उसी का प्रयोग हो।

महात्मा गांधी ने कहा कि जिन ग्रामीणों के पास अधिक जमीन है वे उपयोगी फसल को उगाएं न कि गांजा, तंबाकू, अफीम की खेती करें। वे प्रत्येक ग्रामीण को अनिवार्य रूप से षिक्षित करना चाहते थे। वे गांव में जाति के पक्ष में नहीं थे तािक ग्रामीण समाज में अस्पृष्यता न पनपे (हरिजन, 1942)। उन्होंने बताया कि गांवों के पुननिर्माण की आवश्यकता है तािक शहरों के समान व्यक्ति यहां रह सके। महात्मा

गांधी का कहना था कि सिगार, सिगरेट, चाय, कॉफी (गांधी, 1954; गांधी, 1948), आदि भारत में उत्पाद (अर्थात् स्वदेषी) हो या विदेषी, इसे किसी भी परिस्थिति में भी लेने से बचने के लिए कहा।

महात्मा गांधी (1948) का कहना था कि दुनिया में ऐसे बहुत सी चीजे हैं जो हमारे लिए उतनी उपयोगी नहीं हैं इसके बावजूद भी हम ऐसे ज्ञान को लेते हैं। लेकिन अपने गांव के बारे में जानकारी इकट्ठा करना नहीं चाहते हैं। महात्मा गांधी ने यह भी बताया कि हमें पहले अपने शरीर, अपने घर, अपने गांव और आसपास की फसलों का ज्ञान और इसके इतिहास का पता होना चाहिए। महात्मा गांधी ने बताया है कि षिक्षार्थी को सामान्य ज्ञान में प्राथमिक ज्ञान को सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है और इसी से व्यक्ति का जीवन समृद्ध हो सकता है।

गांधी जी दूरदर्शी थे और गांवों की स्थित देखकर बताए कि गांवों में अब ताजी सिं में और फल उपलब्ध नहीं हो पाते हैं जो कि सब्जी और फल की कमी प्रषासन के लिए दुःख की बात है (गांधी, 1959; गांधी, 1948)। सच्चाई यह है कि शहर में फल और सब्जी की खेती संभव नहीं है और यदि गांव में भी फल और सब्जी की खेती न हो तो गांव व शहर के लोग क्या खायेंगे। ऐसे सामान या तो बाहर से आएगा जो कि बाहर से आने पर यह मंहगा होगा। गांधी (1959) ने खेद व्यक्त करते हुए कहा कि अब गांव में भी ताजी सिंज्जियां दुर्लभ हो गई हैं। यदि गांवों में फल और षाक-सब्जी और फल की खेती (गांधी, 1959) हो तो ग्रामीण अर्थव्यवस्था उत्तम होगा व स्थानीय उत्पाद होने के कारण सस्ता होगा। यह कार्य ग्रामीण रोजगार का एक

माध्यम भी बनेगा। गांधीजी ग्रामीणों को बताते थे कि वे खूब सब्जियां उगा कर (गांधी, 1948) आर्थिक उन्नित कर सकते हैं।

महात्मा गांधी के अनुसार, नशीली पेय व ड्रग्स कुछ लोगों के लिए आय का स्रोत हो सकता है लेकिन इससे प्राप्त राजस्व को अनैतिक स्रोत ही मानना चाहिए और सरकारी स्तर पर भी इसे राजस्व प्राप्ति के लिए अनैतिक व्यवस्था का दुष्परिणाम ही मानना चाहिए (नारायण, 1968)। उन्होंने किसान को नषीली पदार्थ की खेती और उपयोग नहीं करने के लिए कहा। महात्मा गांधी ने 1921 ई. में असहयोग आंदोलन के समय उन्होंने वायसराय को यह बताने के लिए एंड्रयूज को संदेश भेजा था कि अगर सरकार गांवों में घर की कताई और बुनाई को बढावा देने में मदद करेगी और शराब और अफीम को बंद कराएगी तो वह असहयोग आंदोलन को छोड़ देंगे। अतः स्पष्ट है कि गांधीजी गांव में नषीले पदार्थ की खेती के खिलाफ और कताई-बुनाई के पक्ष में थे।

महात्मा गांधी (1959) ने एक बार कहा कि ग्रामीणों को गुड़ बनाना भी चाहिए और खाना भी चाहिए। चीनी की तुलना में गुड़ स्वास्थ्य के लिए अच्छा है। उन्होंने तार के रस से भी गुड़ बनाने की बात कही। गांधीजी के अनुसार, यदि ग्रामीण गुड़ बनाना बंद करते हैं तो व्यक्ति स्वस्थ खाना से वंचित होंगे। महात्मा गांधी का स्पष्ट कहना था कि ग्रामीण ताड़ की खेती करें, गुड़ बनायें व इसे बेचें। ग्रामीणों का यह स्वरोजगार राष्ट्रीय आय व स्वास्थ्य के लिए बेहतर होगा। महात्मा गांधी ने ग्रामीण रोजगार को बढावा देने के लिए खजूर के रस को भी गुड़ बनाने व इसे व्यवसाय करने के लिए बताया (नैयर, 1948)।

उन्होंने गांव में ताड़ के गुड़ बनाने की बात किये (गांधी, 1948)। उन्होंने ग्रामोद्योग संघ बनाने के समय गुड़ को प्रयोग में लेने का प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने कहा कि यदि भारत में कृषक व व्यवसायी वर्ग द्वारा खजूर या तार के रस का उत्पादन, निर्माण, प्रयोग व व्यवसाय होने लगे तो देश में कभी आर्थिक तंगी नहीं होगी व गरीबों को भी सस्ते दामों पर गुड़ मिलेगा।

महात्मा गांधी चाहते थे कि प्रत्येक ग्राम अपनी आजीविका ढूंढे (गांधी, 1954)। उन्होंने ग्रामीणों को मधुमक्खी पालन के लिए सीखने के लिए कहा ताकि वे प्राप्त मध् को दवाई व खान-पान में प्रयोग में ले सकें। महात्मा गांधी को यह पता था कि सही मध् का प्रयोग स्वयं प्राप्त कर सकते हैं जबिक बाजारू मध् में मिलावट हो सकता है (गांधी, 1954)। उन्होंने आटा पीसने के लिए हाथ चक्की (पत्थर से पीसाई) के प्रयोग को सही बताया और आनेवाले समय में इसे पुनर्जीवित रखने के लिए कहा। इसी प्रकार, उन्होंने मिलों द्वारा धान से बनी चावल-भूसी को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बताया। महात्मा गांधी (1959) के अनुसार, ग्रामीण व अन्य सभी लोग खुद आटा पीसें। उन्होंने आटे पीसने वाले मषीन का विरोध किया और बताया कि स्वास्थ्य के लिए अपने हाथ से आटा पीसना अच्छा है। उन्होंने यह भी कहा कि लाखों लोगों का एक बड़ा हिस्सा जो आटा मिलों का निर्माण करता है, उसके स्थान पर गांव की चक्की को पूनजीर्वित किया जाए तो इससे गरीबी मिटेगी। अतः महात्मा गांधी के अनुसार, मषीन से निर्मित खाद्य पदार्थ के स्थान पर हस्तनिर्मित खाद्य पदार्थ प्रयोग किया जाना चाहिए।

महात्मा गांधी का (1968ब) का कहना था कि, 'मैं व्यक्तिगत रूप से सोचता हूं कि चरखा या कोई भी प्रक्रिया जो कपास की है, उसे आदर्ष व्यवसाय के रूप में अपनाएं। अगर उनके पास इस तरह के व्यवसाय स्थानीय स्तर पर उपलब्ध नहीं है तो कोई अन्य कार्य कर सकते हैं। लेकिन कोई भी व्यक्ति बिना श्रम का कोई भी भोजन नहीं करेगा।' अतः महात्मा गांधी का दूरहिष्ट सोच था कि गांवों में कपास की खेती चरखा को बढावा देगा और उससे बने कपड़े स्वदेषी होने के कारण सभी प्रयोग सस्ते में करेंगे और बाहर पर निर्भर नहीं रहेंगे। उनके अनुसार, यदि मिल में कपड़ा बनते हैं तो ग्रामीण क्षेत्रों से लोगों का विस्थापन बढेगा और इनमें अस्वस्थता बढेगी। व्यक्ति कल-कारखाने के कपड़ों पर निर्भर नहीं रहकर स्वदेषी कपड़ा का प्रयोग करेगा तो रोजगार का अवसर मिलेगा। महात्मा गांधी (1968ब) ने यह उल्लेख किया है कि यदि व्यक्ति स्वदेषी सिद्धांत का पालन करते हैं तो स्वस्थ व्यवसाय के निर्माण में सहायक होगा।

महात्मा गांधी (1968ब) कहते थे कि भूमि ऐसी हो जो अन्न उपजा सकें और इसके लिए किसी भी प्रकार की मषीन की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। महात्मा गांधी का कहना था कि 'मैं ऐसी मषीनें बनाने की हिमायती नहीं हूं जो या तो बहुत से लोगों को गरीब बनाकर मुट्ठी भर लोगों को अमीर बनाती है या अनेक लोगों के उपयोगी श्रम को अकारण विस्थापित कर देती हैं। उनके अनुसार, भारत में श्रमिक ज्यादा है इसीलिए मषीन होने से लाखों-करोड़ों ग्रामीणों को कैसे खाली समय रखा जा सकता है। उन्होंने मषीन के प्रयोग से लोगों को बेरोजगार होना बताया। इसीलिए वे आत्मिनर्भरता के लिए अपने इस्तेमाल की वस्तुयें खुद तैयार करने पर जोर देते थे (प्रभु एवं राव, 1994)। गांधीजी चाहते थे कि व्यक्ति गांव में ही रहकर स्वच्छ और स्वस्थ परिस्थिति का निर्माण करे।

महात्मा गांधी (1962) ने गोबर को सुखाकर रसोई इंधन व घर की साफ-सफाई में प्रयोग करने के लिए इसे सही बताया। उन्होंने बताया कि गोबर रसोई के कार्य (गांधी, 1962) के लिए एक मुख्य विकल्प है जो कि लकड़ी की बचत में सहायक है। गांधीजी का यह मानना था कि खेती करने से पालतू पष् के चारा (भोजन) की समस्या नहीं आएगी। इनके गोबर को कंडी बनाकर व सूखाने के बाद ये रसोई के इंधन का कार्य करते हैं। जानवरों के बच्चे आगे इनके चक्रीय कार्य को पूरा करेंगे। गाय, भैंस, आदि के बच्चे होने पर इनसे दुध प्राप्त होंगे। गांधीजी के अनुसार, जानवर के बच्चे जब बड़े होकर साँढ व भैंसा बनेंगे तो खेत के कार्य, हल खींचने, गाडी खींचने व मादा जानवर द्वारा बच्चे जन्म देने, आदि लाभ हैं। ग्रामीणों को मादा जानवर व इनके बच्चे होने से दुध मिलेगा। इस दुध को ग्रामीण पी सकते हैं या नहीं तो दही, घी, छाछ, पनीर, आदि बनाकर प्रयोग कर सकते हैं। जानवरों के यह उत्पाद (दुध) षुद्ध व स्वास्थ्यवर्द्धक है (गांधीजी, 1948)। अतः महात्मा गंाधी का कहना था कि गांव में प्रत्येक व्यक्ति किसानी व पशुपालन करें।

गांधी (1962) ने अपनी लेखनी में भी उल्लेख किया है कि जिस गांव में पानी हो वहां के किसानों को फलों की खेती के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। महात्मा गांधी (1968ब) का सपना था कि गांव में हस्तिषल्प, कताई, कार्डिंग, आदि के माध्यम से प्राथमिक षिक्षा प्रदान किया जाए। महात्मा गांधी के शब्दों में, 'हस्तिषल्पों में षोशण और दासता की गुंजाइश नहीं है' (प्रभु एवं राव, 1994)। महात्मा गांधी ने गांव में खेती (कृषि) की आवश्यकता पर जोर दिया। वे अपिषष्ट पदार्थ (जानवर के गोंबर व घर के बेकार सामान) से खाद बनाने व इसे पुनः प्रयोग में लेना चाहते थे (गांधी, 1962)।

महात्मा गांधी ने बताया है कि भारत के कई हिस्सों में ग्रामीण रहते हैं और शहर से अधिक गांव है में इसमें भी जनसंख्यात्मक रूप से ग्रामीण जनसंख्या अधिक हैं। ग्रामीण विकास के लिए सभी को षिक्षा. स्वास्थ्य, पेयजल, बिजली, आवास, रोजगार, आदि दिए जाने की आवश्यकता है। ग्रामीणों के लिए मिट्टी, पानी, हवा, जंगल, आदि प्राकृतिक संसाधनों को ग्रामीणों तक पहुंचाया जाना चाहिए। ग्रामीण वर्ग के निर्धन पुरूष, महिला एवं बच्चों में उत्पादन क्षमता, योग्यता एवं उद्यमषीलता को विकसित करने की आवश्यकता हैं। अतः ग्रामीण विकास का उद्येष्य ग्रामीण अंचलों का सर्वांगीण विकास करना है न कि किसी एक पर जोर देना है और अन्य को अनदेखा करना है। महात्मा गांधी (1954) ने बताया है कि 'आज हमारे गांव उतने ही दिवालिया हैं जितने हम खुद हैं।' ग्रामीण विकास में कृषि, उद्योग व सेवा निहित हैं। महात्मा गांधी (1959) ने ग्रामीण विकास के लिए आर्थिक पूनर्गठन की बात किये। महात्मा गांधी का कहना था कि जो भी ज्ञान की आवश्यकता है वह अन्यों की तुलना में इन ग्रामीणों में अधिक है लेकिन ये सीधे-सादे, सरल व सादगी जीवन जीने के कारण अन्य नहीं जान पाते हैं। ग्रामीण लोगों में ज्ञान की प्रचुर मात्रा है (गांधी, 1954)। महात्मा गांधी (1976अ) ने बताया है कि हमें अपने गांवों के लिए बेहतर सड़क, बेहतर स्वच्छता और बेहतर पेयजल आपूर्ति की आवश्यकता है। गांधीजी (1933) के अनुसार, मानव के लिए शरीरिक श्रम किया जाना आवष्यक है। यह कार्य खेत में किया जा सकता है या नहीं तो खेती के बदले दूसरा मेहनत कर जैसे, कताई, बुनाई, बढईगिरी, लोहारी आदि कार्य कर किया जा सकता है। महात्मा गांधी का सपना था कि प्रत्येक गांव का अपना जल संस्थान हो जो कि स्वच्छ जल की आपूर्ति सुनिष्चित करे। इसकी व्यवस्था नियंत्रित कुंओं या तालाबों से की जा सकती है। ग्रामवासियों को अपने कौशल में इतनी वृद्धि कर लेनी चाहिए कि उनकी तैयार की गई चीजें बाहर जाते ही हाथों-हाथ बिक जायें (प्रभु एवं राव, 1994)।

उन्होंने प्रत्येक गांव को स्वदेषी खेल प्रांगण और स्वदेषी खेल को उभारने पर जोर दिया। उन्होंने ग्रामीणों को डिं॰क्स और इग्स से दूर रहने के लिए बताया। उन्होंने हिंदू, मुस्लिम, मुसलमान, सिख, पारसी और इसाई में भाईचारा रखने और अस्पृष्यता से दूर रहने के लिए कहा। महात्मा गांधी का कहना था कि जब हम अपनी आवष्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी पड़ोसी को छोड़कर किसी और के पास जाते हैं तो मानव जाति के एक पवित्र नियम को तोड़ते हैं। उन्होंने उदाहरण देकर समझाया भी है कि यदि आपके स्थल के आसपास संबंधित सामान उपलब्ध है या वहीं उत्पाद होता है तो बाहरी लोगों से सामान खरीदना या बाहरी सामान खरीदना स्वदेषी के खिलाफ दोशपूर्ण विचार को जन्म देता है। महात्मा गांधी का कहना था कि ग्रामवासियों को अपने कौशल में इतनी वृद्धि कर लेनी चाहिए कि उनकी द्वारा तैयार की गई चीजें बाहर जाते ही हाथों-हाथ बिक जायें (प्रभू एवं राव, 1994) व आपस में ग्रामीणों में भेदभाव न हो।

महात्मा गांधी (1954; 1959) ने कहा है कि व्यक्ति ग्रामीण परिवेश में रह रहा हो या शहरी परिवेश में, सभी में षारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक बीमारियाँ आती हैं। उन्होंने बीमारियों के कई कारणों में एक कारण क्पोषण को माना, जो कि ग्रामीणों में अधिक है। ग्रामीणों के लिए प्राकृतिक चिकित्सा (निसर्गोपचार) उत्तम है। महात्मा गांधी ने कहा है कि शहर की चिकित्सा पद्धति ग्रामीण क्षेत्रों में स्थान नहीं बना सकता है। ग्रामीणों की चिकित्सा सुविधा उनके स्थानीय क्षेत्र में होनी चाहिए। महात्मा गांधी के अनुसार, हमें गरीब व ग्रामीण लोगों के पास जाना चाहिए न कि यह उम्मीद करनी चाहिए कि ग्रामीण सामान्य उपचार कराये या अस्पताल जाकर उपचार कराये। उन्होंने ग्रामीण क्षेत्र को प्राकृतिक संसाधनों का भंडार बताया और कहा कि प्राकृतिक चिकित्सा व संसाधनों से ही व्यक्ति का उपचार हो। उन्होंने मिटटी के पुल्टिस बांधने, धूप के प्रयोग व इससे बचाव, स्नान, बर्फ, भाप, सामान्य, ठंडा व गर्म पेय जल, खुले आसमान के सामने सोने, प्राकृतिक व स्वच्छ हवा लेने, खाने में मषाला, नमक, दुध, आदि का संतुलित प्रयोग, उपवास, ब्रह्मचर्य पालन, खान-पान को पथ्य के अनुसार पकाने व संतुलित खाने, आदि के माध्यम से ग्रामीणों के लिए उपचार प्रविधि बताया (गांधीजी, 1948)। महात्मा गांधी का कहना था कि प्राकृतिक चिकित्सा (घरेलू चिकित्सा व पंचतत्व चिकित्सा सहित) ग्रामीणों के लिए उपयुक्त चिकित्सा पद्धति है क्योंकि ग्रामीण प्रकृति के अधिक निकट हैं। गांधीजी ने बताया है कि प्रभावोत्पादक उपचार व्यक्ति के गांव के आसपास में होनी चाहिए। ग्रामीण भोले-भाले व सरल होते हैं अतः चिकित्सक इनसे सहान्भूति व धैर्य से बात करें।

उन्होंने गांव में ही महिलाओं को प्रसव करवाने पर जोर दिया न कि गांव में सुविधा नहीं होने से शहर जाकर प्रसव करायें। उन्होंने चिकित्सक के दिलो-दिमाग में गांव वाले के प्रति अगाध संबंध व प्रेम बनाकर उपचार करने के लिए बताया। उन्होंने कुछ चिकित्सकों के

पेषागत कर्तव्य के बारे में बताया कि कुछ सामाजिक समस्याओं के आधार पर (जैसे कि-अपराधिक जनजाति) रोगी के साथ भेदभाव नहीं करें। वे ग्रामीणों की ब्री आदतों को दूर करना भी चिकित्सकों का कर्तव्य बताया। महात्मा गांधी के जीवनकाल में हैजा एक बहुत बड़ी बीमारी थी जिससे लोग मरते भी थे, वे इसे दुर करने के लिए एक बार चिकित्सक को कहे थे। वे बारिश व ठंड से उत्पन्न रोग का निवारण प्राकृतिक उपचार में खोजते थे। महात्मा गांधी ने षारीरिक बीमारी और अन्य समस्या के समाधान के लिए प्राकृतिक चिकित्सा व रामनाम लेने के लिए बताया। उन्होंने संकट में निष्चित रूप से हरिनाम के लिए बताया। महात्मा गांधी ने स्वच्छता से स्वास्थ्य का संबंध बताया और कहा कि व्यक्तिगत, घरेलू और सार्वजनिक स्वच्छता, आहार और व्यायाम के नियमों का कडाई से पालन किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि यदि इसे कडाई से पालन किया जाए तो गांवों में डाॅक्टरों, हकीमों व वैद्यों की जरूरत नहीं होगी। महात्मा गांधी ने ग्रामीणों को बीमारी दूर करने के लिए चिकित्सक द्वारा उपचार के समय रामनाम का जाप, इष्वर पर विष्वास, धैर्य, आदि के लिए बताया। महात्मा गांधी का कथन बिल्कुल स्पष्ट था कि उनके द्वारा प्रतिपादित प्राकृतिक चिकित्सा ग्रामीणों के लिए है (गांधी, 1954)। महात्मा गांधी का कहना था कि प्राकृतिक संसाधन शहरों में नहीं मिलते हैं व ये संसाधन अभी भी गांवों में मौजूद हैं। जड़ी-बूटियाँ आज भी गांवों में मिलती हैं व ग्रामीण इसे अपने बीमारी के उपचार में प्रयोग में लें। अतः इसे पहचान कर व प्रयोग कर ग्रामीण स्वस्थ्य रह सकते हैं। दूसरे शब्दों में, महात्मा गांधी ने बताया है कि ग्रामीण क्षेत्र में चिकित्सा स्विधा का विस्तार हो और चिकित्सा स्विधा निःषुल्क हो। महात्मा गांधी का कहना है कि ग्रामीण आसपास की जड़ीबूटी, घरेलू (प्राकृतिक) चिकित्सा, विष्वास व धैर्य (रामनाम) से बीमारियों का उपचार करें।

महात्मा गांधी का कहना था कि ग्रामीणों के स्वास्थ्य व खानपान पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। महात्मा गांधी (1959) के अनुसार, गांव के लोग दाल, चावल, रोटी, मिर्च खाते हैं। गांधी (1968ब) ने बताया है कि गेहं व चावल में पौष्टिकता है, यदि इन्हें इससे वंचित कराया जाए तो यह पाप ही होगा। ग्रामीणों द्वारा अधिक मिर्च खाने से सेहत खराब होता है। वहीं शहरी लोग षाक-सब्जी खाना पसंदीदा मानते हैं। महात्मा गांधी का विचार था कि सस्ते और सुलभ खाच पदार्थ ग्रामीण प्रयोग में लें। यदि ग्रामीण क्षेत्र में ताजी और हरी पतिदार सब्जी उपलब्ध हो जाए तो उनका स्वास्थ्य अच्छा हो सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि चिकित्सा व स्वास्थ्यकर्मी ग्रामीण लोगों व स्थानीय लोगों का अध्ययन करे और सूची बनाए कि कौन-कौन सब्जी इनके स्वास्थ्य के लिए अच्छी रहेगी। महातमा गांधी (1959) का कहना था कि किसानों को धान, चावल या अन्य खाद्य फसल सस्ते मिलने चाहिए। उन्होंने बताया है कि गांवों में फल और दुध की सुलभता प्राकृतिक चिकित्सा का अनिवार्य हिस्सा है व इसपर लगा समय व खर्च व्यर्थ नहीं है। इसके प्रयोग सबको लाभ देनेवाली हैं। महात्मा गांधी ने सही व संतुलित खाना को जीने के लिए सही बताया (गांधी, 1959)। उन्होंने ग्रामीणों को स्वस्थ रहने के लिए षाक-सब्जी, फल व दूध खाने के लिए बताया। वे शाक-सब्जी व फल की खेती व दुध के लिए पष् रखने के लिए बताए।

महात्मा गांधी (1954) ने बताया है कि अगर स्थानीय मरीज अस्पतालों का फायदा नहीं उठाते हैं तो बाहर के मरीज गांव में भर्ती हो सकते हैं। लेकिन, ग्रामीण अस्पताल में स्थानीय लोगों की प्राथमिकता होनी चाहिए व इन ग्रामीणों के उपचार का खर्च अस्पताल उठाये। इसके लिए स्थानीय लोगों से पैसा नहीं लिया जाना चाहिए। अर्थात् महात्मा गांधी का मानना था कि प्रत्येक गांव में अस्पताल हो।

महात्मा गांधी ने बताया है कि भारत के पास उपजाऊ भूमि बहुत है, पर्याप्त पानी है और अन्य कोई कमी नहीं है इसीलिए व्यक्ति को शिक्षित होकर आत्मनिर्भर होने की आवश्यकता है। ग्रामीण लोगों सिहत सभी के लिए दवा ऐसी होनी चाहिए कि करोड़ों गरीब हिंदुस्तानियों के लिए फायदा मिले। मैं सिर्फ वैसे ही इलाज के प्रचार की कोशिश करता हूँ जो कि मिट्टी, पानी, धूप, हवा और आकाश के इस्तेमाल किया जा सके.....यानी उन्हें मन, शरीर और उसके आस-पास के वातावरण की सफाई का उपदेश करता हूँ (गांधीजी, 1949)। गांधी (1977) ने बताया है कि 'मैं अब लाखों लोगों के अनुकूल प्राकृतिक चिकित्सा की एक प्रणाली विकसित करने की कोशिश करता हूं जो कि भारत के विशेषकर गरीबों के उपचार के लिए पानी, पृथ्वी, प्रकाश, वायु और आकाश का प्रयोग किया जा सकेगा।'

निष्कर्ष

महात्मा गांधी का कहना था कि ग्रामीण विकास में किसान कारीगर, भूमिहीन कृषक, आदि सभी सिम्मिलित हैं। इनके अनुसार, ग्रामीण विकास से तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धन एवं असहाय लोगों को आर्थिक, सामाजिक एवं षैक्षिक स्तर से उपर उठाकर ग्राम को एक स्वावलंबी बनाना है। महात्मा गांधी ने ग्रामीणों को कृषि, पषुपालन, लघु व कुटीर उद्योग स्थापित करने व इसी के माध्यम से आत्मिनर्भर होने के लिए कहा है। महात्मा गांधी चाहते थे कि प्रत्येक गांव में वयस्कों व बच्चों के लिए रंगमंच, मनोरंजन स्थल, खेल के मैदान,

थिएटर, स्कूल, सार्वजनिक हॉल, कुंआ, टैंक, षुद्ध पेयजल, आदि सुनिष्चित हो। महात्मा गांधी का मानना था कि व्यक्ति स्वदेषी व स्थानीय सामानों का क्रय-विक्रय करे और मषीन से प्राप्त उत्पाद व दूर के स्थानों (गैर-स्वदेषी व विदेषी सामान सिहत) द्वारा निर्मित उत्पाद का पिरित्याग करे भले ही वह सस्ता क्यों न हो। महात्मा गांधी के अनुसार, कोई भी ग्रामीण न तो नषीले पदार्थ की खेती करेंगे, न खायेंगे और न ही इसका व्यापार करेंगे। महात्मा गांधी के विचार में स्वदेषी निर्मित सामान बेराजगारी को दूर करते हैं व ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाते है। उनके अनुसार, ग्रामीण विकास में लघु व कुटीर उद्योगों का विकास तथा विपणन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। महात्मा गांधी ने चिकित्सा प्रबंधन के बारे में बताया है कि ग्रामीण क्षेत्र में चिकित्सा सुविधा का विस्तार हो और चिकित्सा सुविधा निःशुल्क हो। महात्मा गांधी का कहना है कि ग्रामीण लोग आसपास की जड़ीबूटी, घरेलू (प्राकृतिक) चिकित्सा, विष्वास व धैर्य (रामनाम) से बीमारियों का उपचार करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

गांधी, एम. के. (1948). की टू हेल्थ. अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 6, 7, 15, 24)।

गांधी, एम. के. (1954). *नेचर क्योर*. अहमदाबाद: नवजीवन मुद्रणालय (पृष्ठ सं. 35, 36, 42, 44, 45, 46, 62, 63, 64)।

गांधी, एम. के. (1959). *द मोरल बेसिस ऑफ वेजेटेरियनिज्म.* अहमदाबाद: नवजीवन मुद्रणालय (पृष्ठ सं. 6, 13, 14, 23, 25)।

गांधी, एम. के. (1962). विलेज स्वराज. अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 39, 44, 114, 120, 130)। गांधी, एम.के. (1967). *पोलिटिकल एंड नेशनल लाइफ एंड एफेयर्स (वाल्प्यूम-*1). अहमदाबाद: नवजीवन मुद्रणालय (पृष्ठ सं. 72)।

गांधी, एम. के. (1968अ). *द सेलेक्टेड वक्र्स ऑफ महात्मा गांधी.: द* सेलेक्टेड वक्र्स ऑफ महात्मा गांधी (वाल्यूम-4). अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 106)।

गांधी, एम. के. (1968ब). *द सेलेक्टेड वक्रस ऑफ महात्मा गांधी.: द भ्वाइस* ऑफ *डूथ (वाल्यूम-5).* अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 269, 271, 281, 282, 308, 313, 318, 321, 362, 377, 414, 429, 430)।

गांधी, एम. के. (1976अ). *सोशल सर्विस, वर्क एंड रिफार्म (वाल्यूम-1).* अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 73, 108-109, 236)।

गांधी, एम. के. (1976ब). *सोशल सर्विस, वर्क एंड रिफार्म (वाल्यूम-3).* अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 446)।

गांधी, एम. के. (1977). प्रेयर. अहमदाबादः नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 194)।

गांधी (1941). मुन्नाषाह के नाम गांधी के लिखे व्यक्तिगत पत्र. दिनांक 4.4.1941, वाल्यूम-73 (पृष्ठ सं. 421)।

गांधीजी (1933). स्वेच्छा से स्वीकार की हुई गरीबी. अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन मंदिर (पृष्ठ सं. 17,18)।

गांधीजी (1948). *आरोग्य की कुंजी.* अहमदाबाद: नवजीवन मुद्रणालय (पृष्ठ सं. 4-12, 27-39)।

गांधीजी (1949). रामनाम. अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन मंदिर (पृष्ठ सं. 31, 43)।

नारायण, श्रीमन (1968). *सेलेक्टेड लेटर्स ऑफ महात्मा गांधी* (वाल्यूम -4), अहमदाबादः जितेन्द्र टी देसाई नवजीवन पब्लिषिंग। नैयर, सुषीला (1948). *आरोग्य की कुंजी.* अहमदाबादः जितेन्द्र ठाकोरभाई देसाई (प्रकाशक) (पृष्ठ संख्या- 14-21)।

पंत, डी.सी. (2011). *रूरल डेवलपमेंट इन इंडिया.* जयपुर: काॅलेज बूक डिपो (पृष्ठ सं. 11, 12)।

प्रभु, आर.के. एवं राव, यू.आर. (1967). *द माइंड ऑफ महात्मा गांधी:* इनसाइक्लोपिडिया ऑफ गांधी'ज थाउट्स. अहमदाबाद: नवजीवन मुद्रणालय (पृष्ठ सं. 452)।

प्रभु, आर.के. एवं राव, यू.आर. (1994). महात्मा गांधी के चिचार. अहमदाबाद: नवजीवन पब्लिषिंग हाउस (पृष्ठ सं. 237, 263, 302, 353, 354, 355, 358, 363)।

बंग, अभय (२००६). सेवाग्राम ट्रू षोधग्रामः जर्नी इन सर्च ऑफ हेल्थ फोन द पीपुल. मुम्बई: मुम्बई सर्वोदय मंडल (पृष्ठ सं. 11)।

बोस, निर्मल कुमार (1950). *सेलेक्षन्स फ्रोम गांधी: इनसाइक्लोपिडिया ऑफ* गांधी' ज थाउट्स. अहमदाबाद: नवजीवन मुद्रणालय (पृष्ठ सं. 70, 94, 130)।

महात्मा गांधी का विजन (अतिथ्य). विजन ऑफ ए मॉडल विलेज (कलेक्टेड वक्रस ऑफ महात्मा गांधी) (पृष्ठ संख्या- 1-2)।

हरिजन (1936). *हरिजन.* 7.3.1936।

हरिजन (1937). *हरिजन.* वाल्यूम-64, 9.1.1937 (पृष्ठ सं. 217-218)। हरिजन (1942). *हरिजन.* वाल्यूम-76, 26.7.1942 (पृष्ठ सं. 308-309)।

http://support.saan	hnsupport/solutions/articles/6000003502
mahatmagandhis-v	sion-of-a-modelvillage

.....

7. गाँधी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त से प्रेरित भूदान एवं ग्रामदान आन्दोलन और ग्रामीण विकास

- * डॉ. जनक सिंह मीना
- * * बद्रीनारायण जाट

गाँधी का ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त विकेन्द्रीकरण पर आधारित है, यह सिद्धान्त समाज में आर्थिक समानता पर बल देता है। गाँधी ट्रस्टीशिप के माध्यम से आर्थिक विषमता को समाप्त करना चाहता था। ष्ट्रस्टीशिप का सामान्य अर्थ है कि कोई सम्पत्ति जो किसी के स्वामित्व में है, वह दूसरे के नियन्त्रण में उसकी मर्जी से उसके लाभकारी उपयोग के लिए दी जाती है।'1

गाँधी ने अपरिग्रह की भावना को ट्रस्टीशिप के द्वारा एक सम्पूर्ण रूप प्रदान किया। ष्गाँधी ने अपनी आत्मकथा में यह स्वीकार किया है कि गीता के अध्ययन में उनके ट्रस्टीशिप के विचार पूर्णतः समायोजित है और इसे उन्होंने अपरिग्रही जीवन बिता कर पूर्णतः स्पष्ट भी किया एवं इसे एक ठोस उपकरण के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत किया।'2

^{*} महासचिव सह-कोषाध्यक्ष, न्यू पिल्लिक एडिमिनिस्ट्रेशन सोसायटी ऑफ इण्डिया, राजनीति विज्ञान विभाग, जेएनवीयू, जोधपुर

^{**} शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर

इस प्रकार ट्रस्टीशिप कोई खोखला शब्द नहीं है। भू-दान और ग्रामदान की संकल्पना में भी यह निहित है। ष्विनोबा जी ने तो कहा है कि ग्राम-समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति गाँव का एक ट्रस्टी है, जो ट्रस्टीशिप की परिभाषा को सार्थक बनाता है। '3 ट्रस्टीशिप की भावना कोई कल्पना मात्र नहीं है, बल्कि यह समकालीन आर्थिक संकट का एक सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक विकल्प है जिससे भारतीय ग्रामीण समाज का वास्तविक विकास हो सकता है।

महात्मा गाँधी ने अपने समय के सात लाख गाँवों की अर्थ-रचना को सामने रखते हुए स्पष्ट चेतावनी दी थी "यदि ग्रामोद्योगों का लोप हो गया तो भारत के सात लाख गांवों का सर्वनाश हो गया समझिए।" वह तो ढाँचागत निर्माण हेतु गाँव के पाँच किलोमीटर के भीतर उपलब्ध सामग्री का ही उपभोग करने की मंजूरी देते थे। गाँधी इसे ग्रामोद्योग की समृद्धि हेतु जरुरी शर्त के रूप में देखते थे। अतः गाँधी के अनुसार गांवों का विकास गाँव द्वारा भी हो सकता है।

वर्तमान समय में मुख्यतः उद्योगों की स्थापना शहरों के आस-पास ही होता है जो सही नहीं है। गाँवों के सहयोग से ग्रामीण क्षेत्रों में ही उद्योगों की स्थापना होनी चाहिए ताकि गाँधी के विकेन्द्रीकरण का सपना पूरा हो सके।

प्ंजीवाद के बाद भूमण्डलीकरण, उदारीकरण एवं निजीकरण के विकास ने मनुष्य की जीवन-चर्या के साथ दो स्थितियाँ पैदा कर दी है: एक है -विस्थापन प्रकृति वाला असन्तुलित विकास। दूसरा है -स्थानान्तरण प्रकृति वाला असन्तुलित विकास। 4 वर्तमान आधुनिकीकरण, गाँधी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के विपरीत है। आधुनिक आधुनिकीकरण स्वःकेन्द्रित है, जबिक गाँधी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त विकेन्द्रित है।

आज हम संक्रमण काल से गुजर रहे हैं। पुराने मूल्य, पुरानी प्रतिष्ठाएं, जीर्ण होकर ढह रही हैं। नये मूल्य और नयी प्रतिष्ठाओं की स्थापना करनी है। वैश्वीकरण के नये युग में मूल्य परिवर्तन की सिद्धि हम में से हर एक रचनात्मक कार्यकर्ता पर निर्भर है। इसके लिए शायद अनेक व्यक्तियों को आत्माहुति देनी पड़ेगी। इससे जीवन अधिक प्राणवान बनेगा और नये समाज का निर्माण हो सकेगा। परिस्थिति जितनी प्रतिकूल होगी, पराक्रम के लिए उतना ही अधिक अवसर होता है, यही गाँधी विचार का अन्तिम सत्य है। अतः गाँवों को विकास की परिस्थितियों के अनुकूल बनाकर विकास की योजनाएं बनानी होगी।

गाँधी के अनुसार आजादी एक राजनीतिक बात है। गाँधी स्वराज की बात कर रहे थे और स्वराज का मतलब ये कि इस देश का हर एक आदमी अपने जीवन के लिए किसी और पर निर्भर न रहे, उसका अपने ऊपर राज हो। जो आदमी बाहर की जितनी चीजों पर जितना कम आश्रित होगा, जितना कम आधारित होगा, उतना ही वो ज्यादा स्वतन्त्र और उतना ही वो ज्यादा स्वराज वाला आदमी होगा। 5 इस प्रकार गाँवों को आत्मनिर्भर बनाने की बहुत आवश्यकता है।

गाँधी ने 1945 में जवाहर लाल नेहरु को एक पत्र लिखा कि "मेरे आदर्श गाँव में बुद्धिमान व्यक्ति होंगे। 6 वह पशुओं की तरह गन्दगी और अँधेरे में नहीं रहेंगे। पुरुष व महिलाएं स्वतंत्र होगी और वह दुनिया में किसी के विरूद्ध भी निजित्व कायम नहीं रखेंगे। ⁷ वास्तव में जन आधारित विकास में गाँव का शहरों द्वारा शोषण नहीं होना चाहिए, जैसा कि आज हो रहा है बल्कि कृषि और उद्योग तथा गाँव और शहर में पूरा समन्वय होगा चाहिए।

भारत गाँवों में रहता है। जब तक हम उनका सुधार, पुनः निर्माण और विकास नहीं करेंगे, देश का विकास नहीं हो सकता। गाँधी ने कहा था कि यदि भारत को विनाश से बचाना है तो सबसे नीचे (गाँवों) से विकास की शुरूआत करनी होगी। गाँधी जी ने ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त आय-स्तर में भयंकर विसंगतियों को देखकर ही दिया था। विनोबा ने भूदान आन्दोलन के द्वारा इसका सफल प्रयोग कर एक आदर्श भी हमारे सामने रख दिया है।

भूदान

गाँधी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त से प्रेरित भूदान आन्दोलन का जन्म हुआ है तथा उनकी इन उक्तियों में भी अन्तर्मूर्त मालूम पड़ता है कि सच्चा समाजवाद तो हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ है जो हमें यह सिखा गये हैं कि 'सबे भूमि गोपाल की' इसमें कहीं भी मेरी और तेरी की भावनाएं व सीमाएं नहीं है। ये मेरी-तेरी की सीमाएँ तो व्यक्तियों ने बनाई हैं और इसलिए वे इन्हें तोड़ भी सकते हैं। गोपाल अर्थात ईश्वर। आधुनिक भाषा में गोपाल अर्थात राज्य या जनता। आज जमीन जनता की नहीं। यह बात सही है, लेकिन इसमें दोष उन सिखाने वालों का नहीं है। दोष तो हमारा है जिन्होंने उस शिक्षा के अनुसार आचरण नहीं किया। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस आदर्श के जिस हद तक रुस या और कोई देश पहुँच सकता है उसी

हद तक हम भी पहुँच सकते हैं और वह भी हिंसा का आश्रय लिये बिना।7 विनोबा ने गाँधी की इन उक्तियों के आधार पर अपने भूदान यज्ञ के सिद्धान्त में भूमि के समान वितरण की समस्या का अहिंसक समाधान ढूँढ निकाला है जो वास्तव में सत्याग्रह का ही अंग है और भारतीय गाँवों का सच्चा विकास भी इन्हीं में छिपा है।

भूदान यज्ञ के अन्तर्गत खेती करने की इच्छा रखने वाले भूमिहीन कृषकों के लिए भूमिदान मांगा जाता है। इसके पीछे मूल प्रेरणा भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व की प्रवृत्ति का उन्मूलन करना है तथा सभी व्यक्तियों में जमीन का समान वितरण करना है।

भारत गाँवों का देश है, और गाँवों का विकास मुख्यतः कृषि पर निर्भर है। आज के समाज की आर्थिक, सामाजिक विषमता के मूल में यही अन्याय व्याप्त है। ष्हम ने बल प्रयोग के आधार पर अथवा अपनी शिक्त के दुरुपयोग से कुछ मानव समुदायों को भूमि के अधिकार से वंचित कर दिया है। भूदान यज्ञ पाप के प्रायित का एक सुअवसर देता है तथा इस अन्याय के प्रतिकार का एक अहिंसक तरीका है। है विनोबा के शब्दों में ष्भूदान यज्ञ से बे-जमीनों को जमीन मिलती है, एक मसला हल होता है। इस काम का जितना महत्व है, उससे बहुत ज्यादा महत्व इस बात का है कि एक तरीका हाथ में आया। अहिंसा की शिक्त निर्माण करने की एक युक्त हमारे हाथ लगीष्।

भूदान यज्ञ के पीछे दूसरी मूल दृष्टि यह है कि जमीन पाने का वही अधिकारी है जो उसे जोत सके, उससे कुछ उपार्जन कर सके। जो अपने हाथों खेती नहीं करता है उसे जमीन पाने का कोई नैतिक अधिकार नहीं है।10 ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार भूखे और प्यासे को ही अन्न, जल प्राप्त करने का अधिकार है सन्तुष्ट व्यक्ति को नहीं। वेदों में कहा गया है कि पृथ्वी माता है और हम उसके प्त्र हैं। 'माता भूमिः पुत्रोहं पुथ्वीव्यां'। हमें उसकी सेवा करने का अधिकार है। उसकी मालिकयत नहीं परन्तु वर्तमान समाज व्यवस्था में खेती करने वाले गरीबों के पास या तो जमीन नहीं है या है भी तो बहुत ही कम मात्रा में प्राप्त है। लेकिन जो व्यक्ति खेती करना तो क्या खेत पर जाना भी अपनी इज्जत के खिलाफ समझते हैं उनके पास हजारों एकड जमीन बेकार पड़ी है। यह ठीक है कि दूसरे की जमीन में भूमिहीन खेती करता है, परन्तु उससे उनमें वह कार्य-कुशलता नहीं आ पाती, जो अपनी जमीन में होती है। विनोबा कहते हैं कि भाड़े के मकान को कोई कितना सजा सकता है? विश्व के पैमाने पर भी वहां आस्ट्रेलिया, कनाड़ा और अमेरिका जैसे देशों में आबादी की तुलना में जमीन अधिक है वहां चीन तथा अन्य धनी आबादी वाले देशों में खेती करने के लिए बहुत कम जमीन प्राप्त है। अतः जहां पर अधिक जमीन वाले देशों में जमीन बेकार पड़ी रहती है। वहां दूसरे देशों में जीने के लिए तथा आवास के लिए भी जमीन नहीं है। विनोबा भूदान यज्ञ के द्वारा इस समस्या का समाधान ढूंढते हैं।

भूदान को एक नैतिक एवं आध्यात्मिक दर्शन कहा जा सकता है। क्योंकि जो भी जमीन दाता है वह किसी दबाव में आकर दान न दे बिल्क स्वेच्छा से अपनी अन्तरात्मा से जमीन का दान दे। विनोबा सर्वस्व दान की बात करते हैं। वे कहते हैं कि माता-पिता के समान चिन्ता करने की उपमा मैं आप में लागू करना चाहता हूँ। जिस प्रेम से माता-पिता बच्चों के लिए काम करते हैं वे स्वयं भूखे रहकर अपने बच्चों को खिलाते हैं, उनका भरण पोषण करते हैं, शिक्षा दिलाते हैं,

अपने बच्चों के लिए सर्वस्व त्याग करते हैं, वह शक्ति और वह प्रेम में आप लोगों से प्रकट कराना चाहता हूँ। विनोबा कहते हैं कि अब समय आ गया है कि आप सब प्रकार के मतभेद भुलाकर दिल खोलकर दान दें ताकि भारतीय गाँवों का विकास हो सके।

विनोबा के कथानुसार जिसको जमीन मिलेगी वह कोई मुफ्त में बैठकर खाने वाला नहीं होगा। वह जमीन पर मेहनत करेगा, अपना पसीना उसमें मिलायेगा तब वह अपनी रोटी खायेगा। मेहनत व पिरश्रम करके जो खाता है उसका आनंद वही आदमी उठाता है। जो मेहनत करके नहीं खाता उसको पता ही नहीं होता कि यह आनंद कैसा होता है। विनोबा कहते हैं कि इसी पिरश्रम को मैं हर व्यक्ति तक पहुँचाना चाहता हूँ, ताकि समाज में वर्ग भेद, अमीरी-गरीबी, छुआछूत सरीखी की समस्याओं का निदान हो सके और गाँधी ने जिस रामराज्य की पिरकल्पना की थी वो साकार हो सके।

विनोबा आगे कहते हैं कि गाँधीजी के बाद सर्वोदय के सिद्धान्त को मानने वाले हम कुछ लोगों ने समाज बनाया है, जिसमें कोई किसी से द्वेष नहीं रखता। सभी आपस में प्रेम से रहते हैं। कोई किसी का शोषण नहीं करता। उनका विश्वास है कि जैसे ही शोषण रहित समाज का निर्माण कर सकेंगे, हिन्दुस्तान के लोगों की प्रतिभा प्रकट हुए बिना नहीं रहेगी। इसीलिए हम सर्वोदय वालों ने निश्चय किया है कि यह समाज रचना हम बदल देंगे। मेरा इसमें विश्वास है वरना इस तरह जमीन मांगने की मेरी हिम्मत नहीं होती। विनोबा समाज में फैली अमीरी गरीबी की खाई को पाटना चाहते हैं। सभी को आबाद करना चाहते हैं ताकि कोई किसी का अतिक्रमण न करें सभी अपरिग्रह का पालन करे तो समाज सुखी व समृद्ध होगा। उनका पूर्ण

विश्वास था कि रचनात्मक कार्य में सक्रिय भाग के लिए अहिंसक साधन अपनाना ही श्रेष्ठ है। ट्रस्टीशिप की प्रेरणा से ही गाँवों में भाई-चारा और समानता की स्थापना होगी तथा ग्राम आर्थिक रूप से सबल बन सकेंगे।

18 अप्रैल 1951 को विनोबा जी को पहला भूदान तेलंगाना में मिला। तेलंगाना में हरिजनों के पास भूमि नहीं थी। विनोबा ने उनकी समस्या को गहनता से सुना तथा इसके समाधान में जुट गये। विनोबा ने ग्रामवासियों से भूमिदान की बात कही ग्रामवासी ने बड़े ही उत्साह से एक सौ एकड़ जमीन विनोबा जी को दे दी। यही पहला भूमिदान था। हरिजनों को 80 एकड़ भूमि की जरूरत थी। विनोबा को सौ एकड़ मिली। तेलंगाना के हरिजनों की समस्या सुलझ गयी तथा इसी तरह से तो भारत की समस्या सुलझ सकती है, इससे देश में एकता, भ्रातृत्व व सिहष्णुता का विकास भी होगा। विनोबा जी को दो महीने में 12 हजार एकड जमीन वहां पर मिली।

तेलंगाना में जो भूदान मिला उसकी प्रेरणा से ही भूदान को आगे बढ़ाने का काम विनोबा ने शुरु किया। प्लानिंग कमीशन के सामने विनोबा के विचार रखने के लिए नेहरु ने विनोबा को निमंत्रण दिया। उसी समय विनोबा पैदल यात्रा पर निकल पड़े और दिल्ली तक पहुँचने में उन्हें दो महीने लगे इसमें उन्हें रास्ते में 18 हजार एकड़ जमीन मिली उन्होंने देखा कि अहिंसा का प्रवेश देने के लिए जनता उत्सुक थी।

विनोबा ने उत्तर प्रदेश में सर्वोदयी कार्यकर्ताओं की मांग पर उत्तर प्रदेश में व्यापक क्षेत्र में भूदान यज्ञ का प्रयोग किया। उत्तर प्रदेश की जनसंख्या के हिसाब से पाँच लाख एकड़ जमीन का लक्ष्य रखा शीघ्र ही एक लाख एकड़ प्राप्त हो गयी। सेवापुरी के सर्वोदय सम्मेलन में सबने मिलकर सारे हिन्दुस्तान में अगले दो साल में कम से कम 25 लाख एकड़ जमीन प्राप्त करने का संकल्प किया। 25 लाख एकड़ से भारत की समस्या हल होने वाली नहीं थी। समस्या तो 5 करोड़ एकड़ से सुलझेगी लेकिन प्रथम किस्त में 25 लाख एकड़ लेते हैं तो अहिंसा का सन्देश पाँच लाख गाँवों तक पहुँचता है तो भूमि के न्यायोचित वितरण के लिए जरूरी हवा तैयार हो जायेगी, ऐसा विनोबा जी का विशास था।

विनोबा का विश्वास था कि यह ऐसा कार्यक्रम है जिस पर सभी पक्षों को समान भूमि पर काम करने का मौका मिलता है। सभी संस्थाएँ इस कार्यक्रम को अपनायेगी तो सत्य, अहिंसा शुद्धि व एकता को बल मिलेगा। वे कहते हैं कि इस भूदान से हमें आर्थिक क्षेत्र में अहिंसा की प्रतिष्ठा करनी है। इससे तिहरा लाभ होगा - पहला भारतीय सभ्यता के अनुकूल है, दूसरा इसमें आर्थिक और सामाजिक क्रांति का बीज है और तीसरा इससे दुनिया में शांति स्थापना के लिए सहायता मिलेगी। साथ ही भारतीय समाज में समानता की स्थापना भी होगी।

इस प्रकार भूदान आन्दोलन का सूत्रपात तेलंगाना से होकर लगभग पाँच वर्ष तक विनोबा जी के सानिध्य में चला। इसमें मध्यप्रदेश, मध्य भारत, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, बिहार, उड़ीसा, बंगला, आन्धप्रदेश व समस्त भारत में 44 लाख एकड़ जमीन विनोबा जी को भूमिदान में मिली और गाँधी का रामराज्य की परिकल्पना वास्तविक रूप से उजागर होने लगी।

ग्राम दान

ग्रामदान, भूदान आन्दोलन से ही आरम्भ हुआ है भूदान आन्दोलन का पहला कदम था गांव में कोई भी भूमिहीन न रहे और उसका अन्तिम चरण है - गाँव में कोई भी भूमि मालिक न रहे। विनोबा कहते हैं कि हमें स्वामित्व छोड़कर सेवाकार्य स्वीकार करना चाहिए। हर एक को उसके पेट के लिए जरुरी अन्न मिलना उसका अधिकार है। प्मालिकयत का अधिकार किसी को नहीं है। ग्रामदान की यह बात बड़ी क्रांतिकारी सिद्ध होने वाली है।

दूसरे शब्दों में यह राज्यमुक्त अंहिसक समाज की स्थापना की प्रथम इकाई है, तथा नये समाज के संगठन का नवीन विचार है। जिसमें शासन व्यवस्था की पूर्ण इकाई ग्राम को माना है, इसीलिए ग्राम दान को विनोबा एक समग्र विचार मानते हैं।

गाँधी के ट्रस्टीशिप की योजना में ग्रामदान एक है, तो दूसरी ओर सम्पूर्ण समाज के आत्मदर्शन का भाव है और दोनों मिलाकर ग्राम समाज के परिवारीकरण की योजना है। जिसमें प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से दुःख से सहज भाव से समान हक समझकर हाथ बंटाता है। समग्र ग्रामदान के विचार में केवल जमीन के दान से काम नहीं चलता है। इसमें जमीन, शक्ति, बुद्धि और सम्पत्ति सभी का दान संगठित रूप से होता है। चूंकि ग्रामदान धर्म का विचार है अतः इसे सार्वभौम बनाने

का प्रयास किया गया है। सामान्यतया दान की प्रक्रिया में एक दाता और दूसरा ग्रहणकर्ता होता है। परन्त् ग्राम दान में सभी व्यक्त दाता व ग्राहणकर्ता होते हैं। विनोबा की दृष्टि में समाज का कोई भी व्यक्ति नास्तिकदान नहीं है। सभी व्यक्ति आस्तिवान हैं। परन्तु सभी के पास समान वस्तु नहीं होती है। अतः सभी को अपनी-अपनी वस्तुओं का त्याग समाज के निमित्त करना ग्रामदान में आवश्यक माना गया है। विनोबा कहते हैं कि ष्लोगों ने कल्पना कर रखी है कि समाज में कुछ आस्तिकमान है कुछ नास्तिकमान।' पर एक दिन मेरे ध्यान में आया कि इस दुनिया में कुल लोग आस्तिकमान हैं। परमेश्वर की कृपा से नास्तिकमान कोई नहीं है। ष्किसी के पास भूमि है किसी के पास सम्पत्ति, किसी के पास प्रेम है। हर किसी के पास कोई ना कोई चीज पड़ी है लेकिन उस चीज का उपयोग वह सीमित रूप से करता है। ग्राम दान का अर्थ है कि उसके पास जो है वह समर्पित कर दे ग्राम को। नहीं तो यह होगा कि कुछ लोगों का धर्म है लेने का और कुछ का देने का। ऐसा नहीं हो सकता। धर्म वही है जो सब पर लागू होता है। जैसे सत्य धर्म है तो वह सब पर लागू होता है, करुणा धर्म है तो वह सब पर लागू होती है।'13 विनोबा के अनुसार मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह अपनी आवश्यताओं के लिए एक दूसरे पर निर्भर रहता है। अतः कोई भी व्यक्ति परमाणुओं की भांति एक दूसरे से अलग नहीं रह सकता।

अतः यह उसमें सामुदायिक भावना के विकास का एक प्रयास है।

ग्रामदान के द्वारा समाज में आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा मानव व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं के बीच सन्तुलन कायम करने का प्रयास किया जाता है। इन क्षेत्रों में संतुलन आने और वैमनस्य मिटने पर ही व्यक्ति आध्यात्मिकता को प्राप्त कर सकता है, इसीलिए ग्रामदान के द्वारा समाज की विभिन्न प्रकार की शक्तियों के बीच सन्तुलन स्थापित किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य समाज में मूल्य परिवर्तन के द्वारा क्रांति लाना है।

ग्रामदान एक नैतिक विचार है। विनोबा का यह विश्वास है कि भूमि और सम्पत्ति की मालकियत समाप्त होते ही समाज में झगड़-फसाद, मामला-मुकदमा, चैरी-डकैती आदि बुरे आचरण समाप्त हो जायेंगे। ग्राम-दान एक मुक्ति का विचार है। विनोबा के अनुसार ''मैं'' और ''मेरा'' का भाव ही बन्धन का मूल है। व्यक्तिगत स्वामित्व के समाप्त होने से ''मैं'' और ''मेरा'' का भाव धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है तथा हमारे लिए मुक्ति का रास्ता साफ हो जाता है।ष्में सबका और सब मेरे यह बोध होगा तभी मुक्ति लाना होगा।

भूदान पदयात्रा के दौरान 1952 में विनोबा जी को पहला ग्रामदान उत्तर देश में मिला था मगरोठ। उसके बाद उड़ीसा के अन्दर विशराम पुर मिला तथा इसके साथ ही ग्रामदानों की वर्षा सी होने लगी। बिहार, तमिलनाडु, बंगाल, असम आदि राज्यों में अनेक ग्रामदान मिले। 30 जून, 1968 तक विनोबा जी को भारत वर्ष में 62,215 ग्राम ग्रामदान में मिले।

राजस्थान में ग्रामदान आन्दोलन को बढ़ावा दिया सबसे पहले श्री विनोबा जी ने राजस्थान में पहला ग्रामदान नागौर जिले के गोरावा गांव का 11 फरवरी 1955 को हुआ। जिले के भूदान संयोजक श्री बद्री प्रसाद स्वामी की प्रेरणा से इस ग्राम के लोगों ने अपनी सारी भूमि ग्रामदान में समर्पित कर दी। श्री गोकुल भाई भट्ट की अध्यक्षता में इस गांव की सारी भूमि का पुनर्वितरण परिवार के सदस्य की संख्या के आधार पर हुआ, परन्तु दुःख की बात है कि बाद में कुछ बाहर के लोगों के बहकावे में आने के कारण गाँव वालों की वह भावना कायम नहीं रही और ग्रामदान की गंगा उस गाँव में रुक गई परन्तु राजस्थान के अन्य क्षेत्रों में बह निकली और 1957 राजस्थान में ग्रामदानी गाँवों की संख्या 11 तक पहुँच गई इसके अतिरिक्त भूदान में प्राप्त जमीन के दो बड़े भागों में दो गाँव गाँधीग्राम टोंक जिले में और भूदानपुरा बांसवाड़ा जिले में बसाये गये। इसके पश्चात् ग्रामदान आन्दोलन धीरे-धीरे व्यापक होने लगा। पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा अमीर अधिक अमीर बना है। गाँवों के कल्याण का एकमात्र रास्ता है गाँधी-विनोबा के मार्ग का अनुकरण कर ग्रामदान द्वारा ग्रामों को स्वावलम्बी बनाकर विकास के मार्ग पर अग्रसर किया जाए।

इस प्रकार इस वैश्वीकरण के युग में यदि समाज में शांति और अहिंसा चाहिए तो गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत की बहुत आवश्यकता है। समाज में अभावग्रस्त जीवन जी रहे लोगों के विकास हेतु सरकार को एक ट्रस्टी की भूमिका अपनानी होगी। गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त से प्रेरित होकर विनोबा जी ने भू-दान एवं ग्राम-दान आन्दोलन चलाये थे यह भी भारतीय ग्रामीण विकास के लिए एक आदर्श रूप है।

संदर्भ सूची

- 1. तत्त्वमिस, महात्मा गांधी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003.
- 2. विनोबा भावे, सर्वोदय और साम्यवाद; वाराणसी: सर्व-सेवा-संघ, 1967.

- 3. विनोबा भावे, विनोबा प्रवचन, सर्व-सेवा-संघ, वाराणसी, 1967, 30.10.1957.
- 4. प्रो. दया शंकर, अन्तिम जन पत्रिका, गाँधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली, नवम्बर, 2014, पृ.सं. 24, ISSN: 2276-1633
- 5. प्रभास जोशी, अंतिम जन पत्रिका, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, नई दिल्ली, जनवरी 2015, पृ.सं.14-15.
- 6. के.डी. गंगराड़े, गाँधी जी के आदर्श और ग्रामीण विकास, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2006, पृ.सं.11.
- 7. भण्डारी, चारु चन्द्र, भूदान यज्ञ क्या और क्यों, वाराणसी, सर्व सेवा संघ, 1956, प्र.1-3.
- 8. ढढ्ढ़ा सिद्धराज, भूदान में ग्रादान, वाराणसी, सर्व सेवा संघ, 1957, पृ.8.
- भण्डारी चारु चन्द्र, भूदान क्या और क्यों, वाराणसी, सर्व सेवा संघ, 1956, पृ.6.
- 10. भावे विनोबा, भूदान यज्ञ, नई दिल्ली, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, 1956, प्.34.
- 11. विनोबा, ग्रामदान, वाराणसी, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, 1968, पृ.11.
- 12. भण्डारी, चारु चन्द्र, ग्राम दान क्यों? वाराणसी, सर्व सेवा संघ, 1959, पृ.30.
- 13. विनोबा सुलभ ग्रामदान, वाराणसी, सर्व सेवा संघ, 1968, पृ.16.
- 14. भण्डारी, चारु चन्द्र, ग्राम दान क्यों? वाराणसी, सर्व सेवा संघ, 1956, प्.24.

8. गाँधी जी के सपनों का गाँव

* एन.वी.एन.गोपाला कृष्णा राव

भारत माता अनगिनत महानपुरुषों की प्रसविनी है । इन्होंने कई रत्न रूपी साध् , संतों और महात्माओं को जन्म दिया है । इन्हीं रत्न -रूपी महापुरूषों में से एक नाम है गाँधी जी । नाम स्नते ही देश के लोगों को उनके लिए श्रद्धा की भावना हृदय में जाग उठती है । इनका पूरा नाम मोहनदास करमचंद गाँधी है । इनके स्वभाव और गुणों के कारण लोग इन्हें महात्मा कहकर प्कारते थे । गाँधी जी एक ऐसे व्यक्तित्व हैं जिनका परिचय देना आवश्यक नहीं है । गाँघी जी को भारत की आजादी का चेतना माना जाता है । इन्होंने आजाद भारत के लिए एक सपना देखा था । जिसे पूरा करने के लिए उन्होंने अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया । मन, कर्म और वचन से एक नीति अपनाई जिसका मूल मंत्र था , सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलना । सन् 1915 में जब वे अफ़्रीका से वकालत पास करके भारत लौटे तो गाँव के किसानों की हालत देखकर उनसे रहा नहीं गया और सन 1917 ई. में अपनी वाणी रूपी शस्त्र से अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन चलाई । गाँधी जी का कहना था कि भारत गाँवो का देश है । गाँव में किसान रहते हैं , हमें अगर भारत का असली रूप देखना है तो गाँव को विकसित करना होगा । अगर गाँव उन्नति करेगा तभी भारत का विकास होगा । इसलिए उन्होंने ग्रामीण – जन जीवन विकास के लिए क्छ कदम उठाए जिसमें निम्नलिखित आंदोलन शामिल हैं

- . सत्याग्रह आंदोलन
- . असहयोग आंदोलन
- . सविनयावज्ञा

- . वर्ण और जाति में भेद
- . नारी शिक्षा और संशक्तिकरण
- . बेकारी आंदोलन
- . स्वच्छ और शिक्षित भारत इत्यादि

इन कार्यों को पूरा करने के लिए उन्होंने 1917 में बिहार के चम्पारण जिले से शुरू की । उनका मकसद था किसानों एवम् मजदूरो को इंसाफ दिलाना । फिर उन्होंने शिक्षा के विकास के लिए गाँव – गाँव में शिक्षा केंद्र की स्थापना की । शिक्षा के द्वारा वे ग्रामीण स्तर को सुधारना चाहते थे , उनमें आत्मविश्वास पैदा करना चाहते थे । शिक्षा के माध्यम से

गाँव में फैली छुआ – छूत की भावना को दूर करना चाहते थे । गाँघी जी बेरोजगारी मिटाने के लिए विदेशी वस्त्रों का विहण्कार किया और देशी हथकरघे को बढ़ावा देकर गाँव के मजदूरो को आगे बढ़ाया । गाँधी जी स्वयम् रोज चरखा काता करते थे । गाँधी जी का त्याग और बलिदान ग्रामीण वासियों के लिए वरदान से कम नहीं है । गाँधी जी द्वारा देखे गये सपने आज साकार होने जा रहा है । परंतु आज हम सब के बीच वे नहीं है । आज गाँव में बोए गए ग्रामीण - विकास

संस्था केंद्र ज़ोरों से विकास कर रहा है । सरकार भी इसें बढ़ावा देकर बापू जी के सपनों को साकार करने के लिए 100 साल पूरा होने पर गाँव – गाँव में 2 अक्तूबर को ग्रामीण - विकास के लिए कई आयोजन आयोजित किए जा रहे रहे हैं । हमें भी चाहिए कि हम भी सरकार के इस अभियान में सहयोग देकर गाँधी जी के सपनों को साकार करें। गाँव को एक स्वस्थ – स्वच्छ, शिक्षित और बेरोजकार भारत का निर्माण करके देश को आगे बढ़ाएँ।

* बुरा मत देखो * बुरा मत सुनो * बुरा मत बोलो

9. बदलता ग्रामीण सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य एवं महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता वर्तमान के सन्दर्भ में

* डॉ. जीतेन्द्र कुमार डेहरिया

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों के वर्तमान के सन्दर्भ में प्रासंगिकता को जानना एवं बदलती हुई सामजिक ,आर्थिक, जनसांख्यिकीय, तकनीकीय एवं संस्थागत पिरिस्थितियों कि वजह से आ रही कृषि और उद्योग संबंधी चुनौतियों के लिए समाधान ढूँढना। इस सम्बन्ध में कुछ प्रश्नों के माध्यम से उपरोक्त उद्देश्य को पूरा करने का प्रयास किया गया है। जैसे,किस प्रकार गांधी जी के आर्थिक विचार आज की बदलती हुई उपरोक्त पिरिस्थितियों में भी उपयोगी हैं यदि नहीं तो क्यों ? तो वे कौन से कारण हैं जिनके वजह से उनके विचारों की प्रासंगिकता समय के साथ कम हुई है। इन प्रश्नों का उत्तर जानने का प्रयास उपलब्ध साहित्यों एवं द्वितीयक आंकड़ों के माध्यम से इस शोध पत्र में किया गया है।

महातमा गाँधी का जन्म उस समय हुआ था जब देश की कृषि अर्थव्यवस्था अत्यधिक कठिन दौर से गुजर रही थी।जिसका मुख्य कारण अंग्रेजों की दमनकारी, शोषणकारी आर्थिक नीतियों को कठोरता से लागू करना। जिसमें जमींदारी और रैयतवाड़ी प्रथा मुख्य थीं।

इनकी वजह से पूरी कृषि अर्थव्यवस्था चरमरा चुकी थी। देश के कृषकों को न जमीन पर स्वामित्व था और न ही उनके द्वारा पैदा की गयी फसलों पर । वे आर्थिक रूप से असहाय हुआ करते थे, उनके समय पर कर न चुकाने पर प्रताड़ित किये जाते थे, कई कमजोर कृषकों से बेगार करवाया जाता था। गावों में पनप रहे घरेलू एवं कुटीर उद्योंगों को भी अंग्रजों ने नहीं छोड़ा। इन सबका महात्मा गाँधी के जीवन एवं विचारों पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने अंग्रेजों से छुटकारा पाने के लिए अनेक आन्दोलन शुरू किये ताकि ग्रामीण कृषि अर्थव्यवस्था को पुनः सामान्य स्थिति में लाया जा सके इसके लिए उन्होंने ने न केवल अपने विचार दिए बल्कि उसके लिए अनके प्रयास भी किये। लेकिन बदलती सामाजिक-आर्थिक, जनसांख्यिकीय, संथागत एवं तकनीकीय परिस्थितियों की वजह से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को वर्तमान में कई चुनोतियों का सामना करना पड़ रहा है जिसकी

वजह से महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों की प्रासंगिकता काफी प्रभावित हुई है जिसे वर्तमान की परिस्थितियों के आधार पर अपनाने की जरुरत है।

मुख्य शब्द: महात्मा गाँधी, आर्थिक विचार, कृषि, उद्योग, ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं रोजगार

प्रस्तावनाः

भारत देश की अधिकतर ग्रामीण जनसँख्या कृषि एवं कृषि संबंधी अनेक छोटे-मोटे जातिगत एवं गैर जातिगत उद्योग धंधों पर निर्भर रही है इसीलिए इसे कृषि प्रधान देश भी कहा जाता रहा है लेकिन

धीरे-धीरे इस व्यवसाय में बह्त परिवर्तन हुए हैं, चाहे आजादी के पहले की बात हो या फिर आजादी के बाद की। आजादी के बाद जहाँ उच्च कृषि उत्पादन पर अधिक जोर दिया गया है जिसके फलस्वरूप कृषि उत्पादन तो बढ़ा है लेकिन इसके साथ-साथ कृषि तकनिकी भी बदली है, परम्परागत कृषि यंत्रों का उपयोग बहुत सीमित हो गया है। इसके साथ ही साथ कृषक अधिक उत्पादन और अधिक लाभ देने वाली फसलों पर केन्द्रित हो गये है।इसका परिणाम ये हुआ की बहुत सी फसलों का उत्पादन ही समाप्त हो गया। इन फसलों की बुआई, कटाई एवं गहाई के लिए आधुनिक कृषि यंत्रों का उपयोग होने लगा है जिसकी वजह से रोजगार के अवसर बह्त ही सीमित हो गए हैं एवं जनसँख्या में वृद्धि की वजह से कृषि में छोटी-छोटीजोतों की संख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। इसी प्रकार यदि हम घरेलू उद्योगोंकी बात करें तो इनकी संख्या भी बड़े-बड़े आध्निक उद्योगों के विकसित एवं स्थापित होने की वजह से घटी है एवं जाति आधरित उद्योग धंधे भी कई सामाजिक, आर्थिक एवं संस्थागत सहयोग की कमी की वजह से सीमित हो गये है जिनमें रोजागर पाने वालों की संख्या बहुत ही नगण्य हो गयी है (कुमार:2017)।

उपरोक्त परिवर्तन गाँधी जी द्वारा दिए गए कृषि, उद्योग एवं रोजगार संबंधी विचारों एवं गांव के स्वावलंबी या आर्थिक निर्भरता पर प्रश्न चिन्ह खड़ा करता है जिसे गहराई से समझने की जरुरत है।

गाँधी जी के आर्थिक विचारों पर साहित्यों का अध्ययन:

गाँधी जी के आर्थिक विचार के सम्बन्ध में (जोहिन: 2009) कहते हैं की गांधीजी के आर्थिक विचार काफी अलग हैं क्योंकि उनकी जीवन

शैली सादगी से भरा था । गाँधी जी कहते हैं की मनुष्य को अपनी मेहनत और शारीरिक श्रम से ही रोटी और कपड़े की व्यवस्था करनी चाहिए जिसके के लिये कृषि है। चोरी. भ्रष्टाचार या अन्य गलत तरीके से प्राप्त की गयी आय/धन के विरोधी थे क्योंकि वे मानवीय मूल्यों के पक्के थे। वे कहते हैं की जरुरत से ज्यादा कमाया धन को समुदाय की भलाई या किसी ट्रस्ट पर खर्च करना चाहिए। रोजगार प्रप्ति के लिए वे छोटे-छोटे कताई, बुनाई एवं बढ़ई से सम्बंधित उद्योगों के विकास के पक्षधर थे जिससे की गांवों में ही लोगों को रोजगार मिल सके।वे ग्रामीण उद्योगों को बढावा देना चाहते थे ग्रामीण बाजारों का भी विस्तार करना चाहते थे खादी उद्योग के लिए भी उन्होंने खास पहल की थी। इसी प्रकार (मुखर्जी 2009:38) ने अपने लेख में बताया है की गाँधी जी कहते हैं की कोई भी अर्थव्यवस्था आर्थिक रूपसे तब तक आत्मनिर्भर नहीं बन सकती जबतक की उसका पूर्ण रूपसे उद्योगीकरण न हुआ हो और विशेष रूप से घरेलू उद्योगों का। इसी वजह से प्रथम प्रधानमंत्री श्री पंडित जवाहरलाल नेहरु ने उद्योगीकरण को बढ़ावा दिया था लेकिन दुर्भाग्यवश घरेलू उद्योग आधुनिक उद्योगों के विकास की वजह से ख़त्म हो गए। इसी सन्दर्भ में (मधुमती:2011) ने पाया की गाँधी जी कहते हैं की देश की प्रगति उसके अधिकांश ग्रामीण गांवों के विकास, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, उद्योग और ग्रामीण कौशल के विकास में निहित है। एवं ग्रामीण विकास के माध्यम से ही ग्राम स्वराज्य की स्थापना की जा सकती है। जिसमें ट्रस्टीशिप, स्वदेशी, पूर्ण रोजगार, रोटी श्रम, आत्मनिर्भरता. विकेंद्रीकरण, समानता एवं नई तालीम जैसे तत्व निहित हों।उनके अनुसार जहाँ तक संभव हो, गाँव में हर गतिविधि को-ऑपरेटिव आधार पर आयोजित की जानी चाहिए। यहां तक कि कृषि के क्षेत्र में, गांधीजी ने सहकारी खेती की सिफारिश की जो श्रम, पूंजी, औजारों को बचाएगी और सभी वयस्क ग्रामीणों को रोजगार प्रदान करेगी और उत्पादन भी बढ़ाएगी।

उन्होंने कहा, "हमें भूमि के और विखंडन को रोकने का प्रयास करना चाहिए और लोगों को सहकारी खेती के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। गाँव को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए खाद्य-फसलों और कपास का उत्पादन करना चाहिए। कुछ भूमि मवेशियों के लिए और वयस्कों और बच्चों के लिए खेल के मैदान के लिए भी रखी जानी चाहिए। यदि कुछ भूमि अभी भी उपलब्ध है, तो इसका उपयोग तम्बाख्, अफीम इत्यादि उपयोगी नकदी फसलों को उगाने के लिए किया जाना चाहिए. जिससे गाँव को उन चीजों का आदान-प्रदान करने में सक्षम बनाया जा सके, जो उत्पादन नहीं करते हैं। पूर्ण रोजगार प्रदान करने के उद्देश्य से आर्थिक योजना बनाई जानी चाहिए। गाँव के सभी वयस्कों के लिए। प्रत्येक व्यक्ति को रोजगार की गारंटी दी जानी चाहिए ताकि वह अपनी बुनियादी जरूरतों को गांव में ही पूरा कर सके ताकि वह शहरों की ओर पलायन करने के लिए मजबूर न हो। पूर्ण रोजगार को समानता के साथ जोडा जाना चाहिए। शारीरिक श्रम, आत्मनिर्भर गांव की गांधीवादी अवधारणा में एक केंद्रीय स्थान रखता है। इस संबंध में वह रुस-परिजनों और टॉल्स्टॉय से अत्यधिक प्रभावित थे। गांधी जी के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति को अपनी रोटी कमाने के लिए शारीरिक श्रम करना चाहिए। नैतिक अन्शासन और मन के विकास के लिए शारीरिक श्रम आवश्यक है। बौद्धिक श्रम केवल एक संतुष्टि के लिए है और किसी को इसके लिए भूगतान की मांग नहीं करनी चाहिए।

गांधीजी ने आधुनिक मशीनों आधारित औद्योगिकीकरण के सम्बन्ध में कहा की इनसे कुछ ही मदद मिलेगी और इससे आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण होगा। औद्योगीकरण से गाँवों का निष्क्रिय या सिक्रिय शोषण होता है। यह प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करता है। बड़े पैमाने पर उत्पादन के लिए विपणन की आवश्यकता होती है। विपणन का मतलब है एक शोषणकारी तंत्र के माध्यम से लाभ-प्राप्ति।

इसके अलावा, औद्योगिकीकरण जनशिक की जगह लेता है और इसलिए यह बेरोजगारी को जोड़ता है। भारत जैसे देश में, जहां गांवों में लाखों मजदूरों को साल में छह महीने भी काम नहीं मिलता है, औद्योगीकरण से न केवल बेरोजगारी बढ़ेगी बिल्क मजदूरों को शहरी इलाकों में पलायन करने पर मजबूर होना पड़ेगा। यह गांवों को बर्बाद कर देगा। ऐसी तबाही से बचने के लिए गांव और कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। वे ग्रामीणों की जरूरतों को पूरा करने के लिए रोजगार प्रदान करते हैं और गांव की आत्मिनर्भरता को आसान बनाते हैं। यदि दो उद्देश्य पूरे होते हैं तो गांधीवादी मशीन के खिलाफ नहीं हैं: आत्मिनर्भरता और पूर्ण रोजगार। गांधी के अनुसार, ग्रामीणों को आधुनिक मशीनों और उपकरणों का उपयोग करने में कोई आपित नहीं होगी जो वे कर सकते हैं और उपयोग करने के लिए खर्च कर सकते हैं। केवल उनका उपयोग दूसरों के शोषण के साधन के रूप में नहीं किया जाना चाहिए।

(आईशी2001:310) कहते हैं की गांधी से उपजी विचारों की श्रंखला ने पूरे विश्व में सैकड़ों-हज़ारों जमीनी विकासात्मक गतिविधियों के लिए सैद्धांतिक आधार प्रदान किया है। वे मूल रूप से बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण, केंद्रीकृत विकास, वैश्विक मुक्त व्यापार और संयुक्त राष्ट्र से

स्पेक्ट्रम के विपरीत छोर पर जा रहे हैं? विनियमित बाजार तंत्र, "आर्थिक आदमी" के व्यवहार मॉडल पर आधारित है। यही कारण है कि ये वैकल्पिक विकास सिद्धांत हैं, जो कि हस्तक्षेप इकोनॉमिक्स या मार्क्सवाद से उपजी किसी भी तरह से अलग हैं। इसी प्रकार (ब्राउन 1969:327) का अध्ययन में, गाँधी जी के विचार के अनुसार ग्रामीण अर्थव्यवस्था। पूरी तरह से शोषण से बचाता है, और शोषण हिंसा का सार है। आपको अहिंसक होने से पहले ग्रामीण-दिमाग होना चाहिए और ग्रामीण-दिमाग होने के लिए आपको कताई में विश्वास रखना होगा।

बदलता ग्रामीणआर्थिक परिदृश्य एवं गाँधी जी के विचारों की पासंगिकताः

साहित्यों के अध्ययन से पता चलता है की गांधीजी के विचार पूर्णरूप से गांवों को छोटे-छोटे घरेलू उद्योगों को स्थापित कर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आत्मिनर्भर बनाने का था वे शोषण पर आधारित उद्योगीकरण एवं पूंजीवाद के विरोधी थे। लेकिन उनके विचार उस समय की सामाजिक-आर्थिक, जनसांख्यिकीय एवं तकनीकीय परिस्थितियों के अनुसार काफी हद तक प्रासंगिक थे। लेकिन बदलती उपरोक्त परिस्थितियों ने पूरी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का स्वरुप ही बदल दिया है।

आज पूरा देश वैश्वीकरण का शिकार हो गया है। हर चीज का बजारीकरण हो गया है। बड़े-बड़े उद्योग स्थापित हो गये है, रोजमर्रा की विभिन्न आधुनिक वस्तुओं का उत्पादन और उनकी पहुँच गाँव-गाँव एवं घर-घर तक हो गयी है। जिसकी वजह से हस्तशिल्प और

छोटे-छोटे घरेल् उद्योगों का विनाश बड़ी तेजी से हुआ है। शहर और गावों का फासला सड़कों के जिरये कम हुआ है और साथ ही छोटे-छोटे कस्बों का शहरीकरण तेजी से हुआ है। लोगों की आर्थिक निर्भरता शहरों पर तेजी से बढ़ी है इसी की वजह से शहरी जनसँख्या में बृद्धि हुई है और ग्रामीण जनसँख्या में भी पूर्व के दशकों में काफी तेजी से वृद्धि हुई है जिसकी वजह से कृषि जोतों का तेजी से विखंडन हुआ है पिरणामस्वरूप सीमान्त एवं लघु कृषकों की संख्या में तेजी से वृद्धि होकर 85 प्रतिशत तक पहुँच गयी है। इसी के साथ-साथ कृषि मजदूरों, गैर कृषि मजदूरों एवं भूमिहीनों की संख्या में भी काफी तेजी से वृद्धि हुई है।

हरित क्रांति के बाद कृषि में तेजी से तकनीकीय परिवर्तन हुआ है जिसकी वजह से बहु फसलों के स्थान पर एक फसलीय, खाद्य फसलों के स्थान पर व्यापारिक फसलों, गोबर खाद के स्थान पर रासायनिक खाद, लकड़ी के हल बक्खर के स्थान पर ट्रेक्टर एवं अन्य लोहे के बने औजारों को बढ़ावा मिला है। इन सबकी वजह से हमारी कृषि का पूरा स्वरुप परम्परागत के स्थान पर आधुनिक हो गया है जो वर्तमान के लिए तो कुछ हद तक ठीक है लेकिन भविष्य के लिए प्रश्न चिन्ह बन गया है। क्योंकी परम्परागत फसलें ख़तम हो चुकी हैं, परम्परागत लकड़ी के बने औजार एवं बैलों का चलन ख़त्म हो चुका है, गोबर खाद का भी इस्तेमाल समाप्त हो गया है। अब कृषि सिर्फ अध्यधिक लागत पर निर्भर हो गयी है जिसने एक बड़े ग्रामीण तबके को बेरोजगार कर शहरों की और रोजगार की तलाश में धकेल दिया है जो गाँधी जी के विचारों के ठीक विपरीत है। जिसे सामान्य स्थिति में लाना मुश्किल ही नही एक चुनौती भी है। इसके लिए सरकार कई प्रकार की कृषि एवं रोजगार आधारित योजनाओं के माध्यम से कृषि

को फायदे का व्यवसाय बनाने की कोशिश कर रही है लेकिन कृषि लागत निरंतर बढ़ती ही जा रही है एवं रोजगार के अवसर भी कृषि में ख़त्म होते जा रहे हैं (कुमार: 2017)।परिणामस्वरूप कृषि संकट की भयावह स्थिति पैदा हो गयी है जिसका निदान पाना अतिशीघ्र हो गया है।

निष्कर्षः

उपर्युक्त विश्लेषण से हम यह निष्कर्ष पर पहुँचते हैं की हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में स्वतंत्रता के बाद से अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं चाहे वो सामजिक हो, आर्थिक हो, जनसँख्या संबंधी हो, संस्थागत हो या फिर तकनीकीय हो, जिसका प्रभाव रोजगार, उत्पादन, श्रम, पलायन, एवं उद्योगों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है जो गाँधी जी के द्वारा किये गये प्रयासों एवं दिए गए विचारों एवं सुझावों से ठीक विपरीत हैं। तेजी से होते बदलाव की वजह से पूरी ग्रामीण परिवेश एवं अर्थव्यवस्था की तस्वीर बदल गयी है जिसे गहराई से समझने की जरुरत है।

सुझाव:

1 बदलती हुई ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अनुसार कृषि एवं आद्योगिक नीतियों का निर्माण किया जाना चाहिए ताकि भविष्य में आने वाले बदलाओं के बावजूद भी अधिक उपयोगी एवं प्रभावशाली हो सके ।

2 गांधीजी द्वारा किए गए प्रयासों एवं दिए गए सुझावों के आधार पर नीतियों का निर्माण किया जाना चाहिए ताकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आर्थिक रूपसे से अधिक आत्मनिर्भर बनाया जा सके। 3 आर्थिक नीतियां रोजगार उन्मुख एवं गांवों पर आधारित होना चाहिए ताकि गांवों के लघु एवं सीमान्त किसानों, भूमिहीनों, कृषि मजदूरों एवं गैर कृषि मजदूरों को आर्थिक रूप से आत्मिनर्भर बनाया जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

Xaxa, Johani and B.K. Mahakul (2009): 'Contemporary Relevance of Gandhism'

The IndianJournal of Political Science' Vol. LXX, No. 1, Jan-Mar.

Mukherjee, Rudrangshu (2009): 'Gandhi's Swaraj' Economic and Political Weekly,

December 12, 2009, Vol XLIV No 50, p.38.

Madhumathi, M. (2011); 'The Gandhian Approach to Rural Development',

JCRT Vol 1, Issue 2 April.

Ishii, Kazuya (2001); 'The Socioeconomic Thoughts of Mahatma Gandhi: As an Origin of Alternative Development' *Review of Social Economy*, Vol No. 3, September.

Brown, Judith (1969); *Modern Asian Studies*, Cambridge University Press, Vol III, Part 4 October.

Kumar, Jeetendra (2017): Labour and Accumulation in Rural Madhya Pradesh: A Case Study of Dikhatpura Village in Morena District, PhD Thesis Submitted at School of Economics,

University of Hyderabad.

10. महात्मा गाँधी और हिन्दी

* डॉ. अनुज कुमार सिंह सिकरवार

मेरा नम, लेकिन दृढ अभिप्राय है कि जब तक हम हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा दर्जा और अपनी-अपनी प्रान्तीय भाषाओं को उनका योग्य स्थान नहीं देंगे, तब तक स्वराज्य की सब बातें निरर्थक हैं।' उक्त कथन महात्मा गाँधी के 29 मार्च, सन 1818 में इन्दौर में आयोजित आठवें हिन्दी साहित्य सम्मेलन में उनके अध्यक्षीय उद्बोधन का अन्तिम अंश है,। उनके इस सार्वजनिक आह्वान की अनुगुँज तब स्वतंत्रता के लिए संघर्षरत बह्भाषी देश में दूर-दूर तक स्नायी दी थी, लेकिन देश के स्वतंत्र होने के बाद नेताओं ने उनकी इस भावना को एक तरह से भुला ही दिया। तभी तो देश के स्वतंत्र होने के सात दशक से अधिक होने के बाद भी अभी तक हिन्दी को सही माने में अपने राजभाषा होने का दर्जा नहीं मिला है। वह भी तब जब हिन्दी भारत में ही नहीं, विश्वभर में सबसे अधिक बोली-समझी जाने वाली भाषा है। राजनीतिक नेतृत्व की इच्छा शक्ति की कमी तथा निहित क्षेत्रीय राजनीतिक स्वार्थों के कारण राजकाज के साथ-साथ उच्च और सर्वोच्च न्यायालय में अँग्रेजी का वर्चस्व बना हुआ है। हिन्दी अपनी तमाम खूबियों और प्रसार के रहते हुए भी महज आम लोगों की परस्पर सम्पर्क, वस्तुओं की खरीद-फरोख्त तथा मनोरंजन की भाषा बन कर रह गई है । यहाँ तक की हिन्दी भाषा प्रदेशों में भी उसे वांछित स्थान प्राप्त नहीं है। इसका एक बड़ा कारण हिन्दी का अपनों द्वारा ही अपेक्षित मान-सम्मान न देना रहा है, क्योंकि सरकारी नौकरियों, न्यायालय, चिकित्सा, प्रौद्यौगिकी, तकनीकी क्षेत्रों में अँग्रेजी की अनिवार्यता एवं अपरिहार्यता बनी हुई है। अँग्रेजी के अच्छे ज्ञान के अभाव में भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय प्लिस सेवा, भारतीय विदेश सेवा, भारतीय राजस्व सेवा, न्यायिक सेवा, उच्च सैन्य पदों समेत अधिकांश सेवाओं आदि में नौकरी पाना असम्भव है।

उक्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन में ही महातमा गाँधी जी ने अपनी मातृभाषा के महत्व को समझते हुए कहा था, "जैसे अँग्रेज मादरी जबान यानी अँग्रेजी में ही बोलते हैं और सर्वथा उसे ही व्यवहार में लाते हैं, वैसे ही मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का गौरव प्रदान करें, इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।" इसके बाद महात्मा गाँधी ने पाँच हिन्दी दूत' उन राज्यों में भेजे, जहाँ इस भाषा का अधिक प्रचलन नहीं था। इन पाँच हिन्दी दूतों को हिन्दी का प्रचार के लिए सबसे पहले तत्कालीन मद्रास स्टेट भेजा, जिसे वर्तमान में 'तमिलनाइ' कहा जाता है। इन हिन्दी दुतों में महात्मा गाँधी के सबसे छोटे बेटे देवदास गाँधी और स्वामी सत्यदेव भी थे। उनके प्रयासों से दक्षिण भारत के लोगों ने अपने यहाँ 'दक्षिण हिन्दी प्रचार सभा' का गठन किया। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के महात्मा गाँधी सबसे बड़े और प्रभावशाली नेता थे, जो स्वयं गुजराती भाषी थे, पर उन्हें देश के विभिन्न भागों को भ्रमण करते हुए यह जानने-मानने में देर नहीं लगी कि हिन्दी ही स्वतंत्रता आन्दोलन की प्रमुख भाषा बन सकती है, जिसे देश के बहुत बड़े हिस्से में जनसाधारण द्वारा समझा और बोला जाता है। हिन्दी ही देश की एकमात्र भाषा है जो पूरे देश को जोड़ सकती है। इसके पश्चात् वह हिन्दी सबसे बड़े समर्थक और प्रचारक बन गए।

वस्तुतः जब महात्मा गाँधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे, तब उनका सन् 1917 में पहला आन्दोलन बिहार के चम्पारन में 'नील की खेती' के खिलाफ हुआ। वहाँ उन्हें सबसे बड़ी समस्या भाषा को लेकर हुई तब उनकी सहायता कुछ स्थानीय साथियों ने की थी। उसके बाद महात्मा गाँधी ने बहुत जतन से हिन्दी सीखी।

यद्यपि महात्मा गाँधी गुजराती ढंग की हिन्दी में भाषण देते थे, तथापि इसके माध्यम से ही जनता से उनका गहरा जुड़ाव हो गया। हिन्दी के लेखकों, साहित्यकारों, किवयों के साथ उनके रिश्ते अत्यन्त घिनिष्ठ रहे। महाकि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला का किस्सा तो प्रसिद्ध है ही जब गाँधी जी ने कहा कि हिन्दी में कोई टेगौर नहीं है, तब निराला भड़क गए और गाँधी जी से प्रतिवाद किया। उसके बाद महात्मा गाँधी जी ने अपनी भूल स्वीकार कर ली। कुछ ऐसा ही पाण्डेय बैचेन शर्मा उग्र जी के साथ हुआ। उनकी पुस्तक 'चाकलेट' पर जब बनारसीदास चतुर्वेदी ने अश्लीलता का आरोप लगाया और उसे 'घसलेटी' साहित्य कहा, तब यह मामला महात्मा गाँधी तक पहुँचा। इस पर गाँधी जी ने उस किताब को दिलचस्पी लेकर पढ़ा। उन्होंने उग्र जी को उस आरोप से बरी करते हुए उसे समाज के हित में बताया। उस पर बाकायदा उन्होंने अपने पत्र 'हरिजन' में लेख भी लिखा।

महात्मा गाँधी के विचारों और उनके स्वतंत्रता आन्दोलन, स्वदेशी, खादी, विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार, अछुतोद्वार, शराबबन्दी, आदि का समकालीन हिन्दी लेखकों, साहित्यकारों, कवियों के लेखन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द ने स्वीकार किया कि उनका हिन्दी और राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ना गाँधी जी के कारण ही सम्भव हुआ। प्रेमचन्द की गोदान समेत दूसरी रचनाओं में तत्कालीन राजनीति, गाँधी जी के आन्दोलन का जगह-जगह उल्लेख मिलता है। महात्मा गाँधी जी जिस तरह की हिन्दी लिखते और बोलते थे, वे उसे हिन्दी नहीं, बल्कि उसे हिन्दुस्तानी कहते थे। यह उस समय की

संस्कृतिनष्ठ हिन्दी से अलग थी। यह सहज, सरल हिन्दी थी जिसे गाँधी जी ने एक सम्पर्क भाषा के रुप में प्रयोग किया। उनका यह वाक्य बहुत प्रसिद्ध है कि राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है।

महात्मा गाँधी बैरिस्टर, समाज सुधारक और राष्ट्रीय राजनेता होने के साथ-साथ कुशल पत्रकार भी थे। उन्होंने सबसे पहले दक्षिणी अफ्रीका में अंग्रेजी में अखबार निकाला। इसके बाद भारत लौटने उन्होंने गुजराती, अँग्रेजी हिन्दी में कई समाचार पत्र प्रकाशित किये। हिन्दी में महात्मा गाँधी ने 'नवजीवन' और 'हरिजन सेवक' निकाले। उन्होंने प्रसिद्ध पुस्तक 'हिन्द स्वराज' 'आत्मकथा' समेत कई दूसरी पुस्तके भी हिन्दुस्तानी में ही लिखी थी। वह अपने पास आए पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया करते थे।

महात्मा गाँधी ने राष्ट्रभाषा के विषय में 10 अगस्त, सन् 1947 को प्रकाशित लेख में लिखा था । " दिल्ली में मैं रोज ही हिन्दुओं और मुस्लिमों से मिलता हूँ जिनमें हिन्दुओं की संख्या ज्यादा है। इनमें से ज्यादातर एक ही भाषा बोलते जिसमें संस्कृत के शब्द कम होते हैं। फारसी और अरबी के भी (शब्द) ज्यादा नहीं होते, इनकी बड़ी संख्या को देवनागरी लिपी नहीं आती । वे मुझे अलग सी अंग्रेजी में चिट्ठी लिखते हैं और जब मैं उन्हें विदेशी भाषा में न लिखने के लिए कहता हूँ वे उर्दू में लिखते हैं तो अगर ऐसे यह अनेक भाषाओं की खिचड़ी हिन्दी हो और इसकी लिपि केवल देवनागरी हो इन हिन्दुओं की क्या दुर्दशा होगी ?"

"लाखों भारतीय जो गाँवों में रहते हैं उन्हें किताबों से कोई लेना देना नहीं है। वे हिन्दुस्तानी बोलते हैं जिसे मुस्लिम उर्दू लिपि में लिखते हैं

और हिन्दु उर्दू या नागरी लिपि में लिखते हैं। इसलिए हमारा और आपका यह कर्तव्य है कि हम दोनों ही लिपियाँ सीखें।" महात्मा गाँधी से जब यह प्रश्न किया गया कि आधिकारिक रुप से अँग्रेजी का प्रयोग किया जा रहा है और इसे बदलने के बजाय ऐसे ही जारी रखा जाए, क्योंकि लोग इस भाषा को भी भारत में समझने लगे हैं। इस सवाल पर महात्मा गाँधी का कहना था कि अँग्रेजी से बेहतर होगा कि हिन्दुस्तानियों को भारत की राष्ट्रीय भाषा बनाया जाए, क्योंकि यह हिन्दु-मुसलमान, उत्तर-दक्षिण को जोड़ती है। महात्मा गाँधी का यह भी मानना था कि हिन्दी का प्रयोग केवल बोलचाल और देश की आधिकारिक भाषा के तौर पर ही नहीं, बल्कि न्यायालयों में सुनवायी के लिए भी जाना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता है लोगों को राजनीतिक प्रक्रिया पूरी तरह से समझ नहीं आएगी। राष्ट्रीय और क्षेत्रीय भाषाओं को कोर्ट में जरुरी आगे बढ़ाना चाहिए। इसमें कोई शक-सन्देह नहीं कि हिन्दी यदि राष्ट्रभाषा बन सकी, तो उसमें महात्मा गाँधी जी का बहुत अधिक योगदान रहा है।

11 महात्मा गाँधी और सहकारिता

*डॉ. बृजमोहन **डॉ. अनुपम कृष्ण दीक्षित

महात्मा गाँधी, देश आजाद होने के बाद इसको आत्मिनर्भर बनाना चाहते थे। इसके लिए सहकारिता मुख्य थी और उन्होंने गाँवों का विकास सहकारिता के माध्यम से करने की सिफारिश की थी।वे देश को स्वावलम्बी बनाना चाहते थे। गाँव के लोगों के स्वभाव में आपसी तालमेल और चरित्र से सहयोगी होने के कारण ग्रामीण लोगों के बीच सहकारिता आसानी से प्रचलित हो गयी थी और आजादी के बाद अधिकतर उनके अनुयायियों ने गुजरात और महाराष्ट्र में सहकारिता का आन्दोलन शुरु कर दिया था और यही पंजाब के किसानों ने भी किया था और यही पंजाब के किसानों ने भी किया था और फिर सहकारिता पूरे देश में फैल गयी थी।

महात्मा गाँधी के सपने पूर्ण होने के साथ, आज भारत भी दुनिया के प्रमुख सहकारी देशों में शामिल है इसके अलावा आज भारत में लगभग आठ लाख तैंतीस हजार सहकारी उपक्रमों की संख्या है। आज हमारे देश में सहकारी संस्थायें प्राथमिक कृषि समिति से लेकर दुग्ध, डेरी, मछली, मधुमक्खी, मुर्गी, बकरी, उर्घरक उत्पादन विनिर्माण, वितरण, विपणन इत्यादि के जैसे सैंकड़ों कारोबार में सिक्रय है। सहकारिताओं के माध्यम से बेरोजगारी कम होती रही है और और पिल्लिक को रोजगार मिलने में ये सहकारिताएं काफी हद तक सहायक

है लघु व सूक्ष्म उद्योगों के लिए भी ये काफी हद तक सहयोगी हैं। भारत के लगभग 95 प्रतिशत गाँवों में सहकारी संस्थायें सहायता प्रदान कर रही हैं। भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ (एनसीयूआई) के अनुसार सहकारिता को स्कूली पाठ्यक्रम में शामिल की गयी है।

सत्तर के दशक में हरित क्रान्ति लाने में सहकारिता ने बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और इसके बाद 'अमूल' जैसी सहकारी संस्था के माध्यम से श्वेत क्रांति लाना संभव हुआ और इससे हमाना देश सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक सिद्ध हुआ। आज लगभग सभी प्रमुख राज्यों में सहकारिता के जरिये उत्पादित दुग्ध के प्रसिद्ध ब्रांड बाजार में उपलब्ध हैं। जैसे- बिहार में सुधा डेरी, उत्तर प्रदेश में पराग डेरी, राजस्थान में सरस डेरी, मध्य प्रदेश में सांची डेयरी एवं गुजरात में अमूल डेरी है। उदाहरण के तौर पर यह सिद्ध हो चुका है कि डा. वर्गीज कूरियन के कार्यों को देखते हुए, सहकारिता महात्मा गाँधी के सपनों के कितने नजदीक रही है।

भारत के अलावा अन्य विकसित देशों जैसक- नीदरलैंड, फिनलैंड, नार्वे, चीन, जापान, वियतनाम इत्यादि की आर्थिक स्थित सुधारने में भी सहकारिता का विशेष योगदान रहा है। पूरी दूनियों में सहकारी उद्यमी संगठनों की संख्या लगभग पच्चीस लाख है लगभग डेढ़ करोड़ लाभांश धारक है और लगभग दो सौ पचास करोड़ लोगों की आजीविका चल रही है। दुनियाँ में 2030 तक लगभग 40 लाख सहकारी उपक्रमों की संख्या व लगभग दो से ज्यादा आबादी को जोड़ने का लक्ष्य निर्धारित है।

मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं के अनुरूप सहकारिता का क्षेत्र भी अत्यन्त व्यापक है सहकारिता का सिद्धान्त यह है कि दुर्बल व्यक्ति एक साथ मिलकर तथा पारस्परिक सहायता द्वारा ऐसे भौतिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं जो कि केवल धनी एवं शक्तिशाली को ही सुलभ होते हैं। लघ् और सीमांत किसानों, ग्रामीण दस्तकारों, खेतिहर मजदूरों, अनुसूचित जनजातियों एवं जनजातियों को समाज के कमजोर (दुर्बल) वर्ग माना जाता है। लगभग इन्ही श्रेणियों में बकरी व्यवसाय भी आता है। बकरी पालकों को सहकारिता के आधार पर संगठित करके तथा सहकारी संगठनों को सहकारी सहायता का माध्यम बना कर ही बकरी व्यवसाय का उत्थान किया जा सकता है। अन्त में प्रिय बकरी पालकों आपसे यह अन्रोध है कि महात्मा गाँधी के सपने को बरकरार रखने के लिए आप सहकारिता विभाग से सम्पर्क करके बकरी पालन सहकारिता बनाकर जरुर ही करें, क्योंकि अजकल लगभग सभी कार्य सहकारिता के द्वारा ही हो रहे है। और उनमें लाभ भी अच्छा हो रहा है। सहकारिता बनाकर बकरी पालन करने से ऋण आसानी से मिलता है व परियोजना बनाने में भी सहायता मिलती है। इसके अलावा बकरी का बीमा आसानी से हो जाता है जिसमें जोखिम सहन नहीं करना पड़ता है इससे वैज्ञानिक बकरी प्रौद्योगिकियों के ऊपर प्रशिक्षण आसानी से मिल जाता है। सहकारिता से सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, शिक्षा एवं अन्य से सम्बन्धित स्विधायें भी उपलब्ध होती हैं। इस पर एक बार जरुर ही विचार करें और अपना सामाजिक स्तर बढायें।

12.गांधी और हिन्दी

* शेषांक चौधरी

स्वतंत्रता आंदोलन के अगुवा रहे मोहनदास करमचंद गांधी भले ही स्वयं गुजराती भाषी थे लेकिन हिन्दी को लेकर उनका समर्पण अतुलनीय रहा है । स्वतंत्रता आंदोलन में अपने से पहले गांधीजी ने पूरे भारत का भ्रमण किया और पाया कि हिन्दी ही एक मात्र ऐसा भाषाई तंतु है जो संपूर्ण भारत को एकता के सूत्र में पिरो सकती है। भारत में राजनेता के रूप में महात्मा गांधी वे पहले व्यक्ति कहे जा सकते है जिन्होंने राष्ट्रहित के लिए हिन्दी को एक राष्ट्रभाषा के होने की संकल्पना को प्रस्तुत किया था । 1921 में "यंग इंडिया" में प्रकाशित अपने लेख के माध्यम से गांधी जी ने इस बात को स्पष्ट किया था कि भारत में हिन्दी का अपना भावनात्मक एवं राष्ट्रीय महत्व है और भारत की स्वतंत्रता के लिए समस्त राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं को हिन्दी सीखाना आवश्यक है । राष्ट्रभाषा प्रचार अभियान के दौरान एक बार गांधी जी ने कहा था कि - "राष्ट्रभाषा के बिना कोई भी राष्ट्र गूंगा हो जाता है" अत: भारत की राष्ट्रभाषा होना अनिवार्य है ताकि हम अपनी बात बोल सकें । इसके लिए उन्होंने हिन्दी को सर्वश्रेष्ठ भाषा माना क्योंकि उनके अनुसार पूरे भारत मं एकमात्र हिन्दी ही आपसी सहयोग, साहचर्य एवं प्रेम की भाषा है।

जैसा की पूर्व में ही उल्लिखित है की महात्मा गांधी की मातृभाषा गुजराती थी और उन्हें अंग्रेजी भाषा उच्चकोटि का ज्ञान था और सभी

भाषाओं के प्रति उनके मन में विशिष्ट सम्मान भावना भी थी, परन्तु इस सबके बावजूद अनेक सामाजिक व राजनीतिक कारणों के अलावा गांधी जी ने हिन्दी में छिपी भारतीय मूल्यों और परम्पराओं के संवर्धन तथा आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने की क्षमता को परखते हुए भारत के स्वतंत्रता संग्राम में इसके उपयोग को भी ढाल बनाया । इतिहास साक्षी है कि 4 फरवरी, 1916 को गांधी जी ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के एक कार्यक्रम में अपना प्रथम सार्वजनिक भाषण हिन्दी में देकर न केवल वहां बैठे श्रोताओं को स्तब्ध कर दिया था. बल्कि समारोह का संचालन अंग्रेजी में किए जाने पर आपत्ति जताते हुए गहरा दु:ख भी प्रकट किया था । उन्होंने कहा - "इस महान विद्यापीठ के प्रांगण में अपने ही देशवासियों से मुझे अंग्रेजी में बोलना पड़े, यह अत्यंत अप्रतिष्ठा और लज्जा की बात है । मुझे आशा है की इस विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को उनकी मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने का प्रबंध किया जायेगा । हमारे भाषा हमारा ही प्रतिबिंब है और इसलिए यदि आप मुझसे यह कहें कि हमारी भाषाओं में उत्तम विचार अभिव्यक्त किये ही नही जा सकते तब तो हमारा संसार से उठ जाना ही अच्छा है। क्या कोई व्यक्ति स्वप्न में भी यह सोंच सकता है की अंग्रेजी भविष्य में किसी भी दिन भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है ? (श्रोताओं की नहीं) फिर राष्ट्र के पांवों में यह बेडी किसलिए ?

1916 में ही कांग्रेस अधिवेशन में भी गांधी जी ने हिन्दी में भाषण दिया था। वास्तव में देखा जाए तो 15 अक्तूबर, 1917 में बिहार के भागलपुर में आयोजित एक छात्र सम्मेलन के दौरान महात्मा गांधी द्वारा दिए गए हिन्दी भाषण ने "राष्ट्रभाषा हिन्दी" की नींव भारतीय जनमानस विशेषकर युवाओं के मन-मस्तिष्क में डाली थी। उन्होंने अपने भाषण में कहा "मातृभाषा का अनादर मां के अनादर के बराबर

है जो मातृभाषा का अपमान करता है वह स्वदेश भक्त कहलाने लायक नहीं है" ।

1917 में कोलकत्ता अधिवेशन में राष्ट्रभाषा प्रचार संबंधी सम्मेलन में तिलक के अंग्रेजी में भाषण देने की गांधी जी ने जमकर आलोचना की थी। उन्होंने अपनी अपील में वहां उपस्थित सभी लोगों से कहा था कि हर भारतीय को हिन्दी सीखने की आवश्यकता है, क्योंकि अपनों तक अपनी बात हम अपनी भाषा द्वारा ही पहुंचा सकते हैं। महात्मा गांधी किसी भाषा के विरोधी नहीं थे वरन वे तो अधिक से अधिक भाषाओं को सीखने में रूचि रखने की सीख देते थे लेकिन इसके बावजूद भी व्यक्ति के लिए उसकी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में "हिन्दी" के सदैव सबल समर्थक रहे।

गांधी जी ने गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक जैसे महान व्यक्तियों के साथ-साथ अनेक राष्ट्रीय नेताओं से हिन्दी सीखने का आग्रह किया था। महात्मा गांधी जी ने भाषा प्रश्न को स्वराज से जोड़ते हुए देश के करोड़ों भूखे, अनपढ़ और दिलतों जैसे आम भारतीय जन की भाषा "हिन्दी" को राष्ट्रभाषा बनाने पर बल दिया। जनवरी, 1918 को गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर को गांधी जी द्वारा लिखे पत्र में उनकी हिन्दी के लिए उज्जवल भविष्य की इच्छा और चिंता दोनों प्रतिबिंबित होती है। वे लिखते है "मैं मार्च में इंदौर में आयोजित "हिन्दी साहित्य सम्मेलन" के अधिवेशन में अपने भाषण के लिए कुछ प्रश्नों पर विचारवान लोगों के मत एकत्र करना चाहता हूं, वे प्रश्न इस प्रकार है:

1. क्या हिन्दी अंतः प्रांतीय व्यवहार तथा अन्य राष्ट्रीय कार्यवाई की एक उपयुक्त एकमात्र संभव राष्ट्रीय भाषा नहीं है ?

- 2. क्या हिन्दी कांग्रेस के आगामी अधिवेशन में मुख्य उपयोग में लाई जाने वाली भाषा नहीं होनी चाहिए ?
- 3. क्या हमारे विद्यालयों और महाविद्यालयों में उच्चिशिक्षा देशी भाषाओं के माध्यम से देना वांछनीय और संभव नहीं है और क्या हमें प्रारंभिक शिक्षा के बाद अपने विद्यालयों में हिन्दी को अनिवार्य द्वितीय भाषा नहीं बना देना चाहिए ?

मैं महसूस करता हूं कि यदि हमें साधारण जन तक पहुंचना है और यदि राष्ट्रीय सेवकों को सारे भारत वर्ष के जनसाधारण से संपर्क करना है तो उपर्युक्त प्रश्नों का तुरंत हल किया जाना चाहिए ।

मार्च, 1918 में इंदौर में आयोजित "हिन्दी साहित्य सम्मेलन" अपने अध्यक्षीय भाषण में वे कहते हैं - "जैसे अंग्रेज अपनी मादरी जबात अंग्रेजी में ही बोलते है और सर्वथा उसे ही व्यवहार में लाते हैं, वैसे ही मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करें । हिन्दी सब समझते हैं । इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए । यदि हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषंा होगी तो साहित्य का विस्तार भी राष्ट्रीय होगा । जैसे भाषाक वैसी भाषा । भाषा सागर में स्नान करने के लिए पूर्व - पश्चिम, उत्तर, दक्षिण से पुनीत महात्मा गांधी आएंगे तो सागर का महत्व स्नान करने वालों के अनुरूप होना चाहिए ।

महातमा गांधी कहते थे कि देश के हर कोने में हिन्दी को सभी समझते हैं, भले ही दक्षिण भारतीयों को बोलने में किठनाई होती है। गांधी जी का हिन्दीवादी दृष्टिकोण स्पष्ट तथा इसलिए उन्होंने द्रविड प्रदेशों में राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने के लिए हिन्दी को विधिवत सिखाने की एक योजना बनाई और इस काम के लिए विशेष रूप से पुरूषोत्तम दास टंडन, वेंकटेश नारायण तिवारी, शिव प्रसाद गुप्ता जैसे हिन्दी सेवियों को वहां "हिन्दी प्रचार सभा" के लिए भेजा यहां तक कि उन्होंने अपने छोटे पुत्र देवदास गांधी को वहां "हिन्दी प्रचार सभा" के लिए भेजा।

16 जूर, 1920 को "यंग इंडिया" में वे लिखते हैं कि "मुझे पक्का विश्वास है कि किसी दिन हमारे द्रविड़ भाई बहन गंभीर भाव से हिन्दी का अध्ययन करने लगेंगे । आज अंग्रेजी भाषा सीखने में करें, तो बाकी हिन्दुस्तान जो आज उनके लिए बंद किताब की तरह है उससे वह परिचित होंगे और हमारे साथ उनका ऐसा तादात्म्य स्थापित हो जाएगा जैसा पहले कभी नथा । स्वदेशी, स्वराज और राष्ट्रभाषा गांधी जी के राष्ट्रीय जागरण के अंग थे । हिन्दी उन्होंने दो अखबार - "नवजीवन" और "हरिजन सेवक" भी निकाले जिनके माध्यम से हिन्दी का प्रचार-प्रसार हुआ ।

इस प्रकार है देखते हैं कि गांधी जी की हिन्दी मुहिम ने लोगों में हिन्दी के विकास में योगदान को अपना राष्ट्रीय धर्म समझने की प्रेरण जागृत की । विडंबना ही है सदी पूर्व गांधी जी द्वारा हिन्दी के प्रति पूछे गए प्रश्न आज भी प्रश्नचिन्ह लगे यथावत खड़े हैं । संभवतः भाषाई गुलामी हमें आनुवांशिक बीमारी के रूप में मिल गई है । हम इस भाषाई-मानसिक गुलामी की जंजीरों को तोड़ कर भाषा (हिन्दी) के माध्यम से अपनी उन्नति की सुदृढ़ नींव रखने में सफल हो पाते ।

13. महात्मा गांधी और हिन्दी

*राकेश शुक्ला

"त्ने दुश्मन से प्यार किया, अन्यायों का प्रतिकार किया, भूले भटके इंसानों को नवजीवन का आधार दिया । चल पड़े करोड़ो मानव-जन तेरे जीवन का पथ महान" ।

बापू तेरा जीवन महान

भारत के दक्षिण पश्चिम में काठियावाड़ नाम का एक क्षेत्र है जिसके पोरबंदर नामक स्थान पर 2 अक्तूबर, 1869 को एक महापुरूष ने जन्म लिया जिनका नाम मोहनदास करम चंद गांधी था तथा विश्व में ये महात्मा गांधी के नाम से प्रसिद्ध हुए । उनके पिता करमचंद गांधी काठियावाड़ की एक छोटी सी रिसायत के दीवान थे तथा उनकी मां पुतलीबाई परनामी वैश्य समुदाय से ताल्लुक रखती थी । वे अत्याधिक धार्मिक प्रवृत्ति की थी जिसका प्रभाव युवा मोहन दास पर पड़ा ।

प्रारंभिक जीवन और शिक्षा

1887 में उन्होंने मैट्रिक परीक्षा अहमदाबाद से उत्तीर्ण की । इसके बाद भावनगर के शामलदास कालेज में दाखिला लिया लेकिन खराब स्वास्थ्य के कारण वापस पोरबंदर आ गये । वर्ष 1888 में मोहनदास यूनिवर्सिटी कालेज लंदन में कानून की पढ़ाई करने और बैरिस्टर बनने लंदन चले गये । जून, 1891 में गांधी भारत लौट गये और वहां

जाने के बाद उन्हें अपनी मां की मृत्यु कि बारे में पता चला । उन्होंने मुंबई में वकालत की शुरूआत की लेकिन यहां उन्हें कोई खास सफलता नही मिली । इसके बादे वे राजकोट चले गये जहां उन्होंने जरूरत मंदों के लिए मुकदमें की अर्जियां लिखने का कार्य शुरू कर दिया परंतु कुछ समय बाद उन्हें यह काम भी छोड़ना पड़ा । आखिरकार 1893 में एक भारतीय फर्म में नेटल (दक्षिण अफ्रीका) में एक वर्ष के करार पर वकालत का कार्य स्वीकार कर लिया ।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का संघर्ष (1916-1945) एवं हिन्दी का सफर

आजादी के आंदोलन के सबसे बड़े नेता रहे मोहनदास करमचंद गांधी भले ही खुद गुजराती भाषी थे, लेकिन हिन्दी को लेकर उनका योगदान अतुलनीय रहा है । 1914 में गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत वापस लौट आये । इस समय तक गांधी एक राष्ट्रवादी नेता और संयोजक के रूप में प्रतिष्ठित यहो चुके थे । वे उदारवादी कांग्रेस नेता गोपाल कृष्ण गोखले के कहने पर भारत आये थे और शुरूआती दौर में गांधी के विचार बहुत हद तक गोखले के विचारों से प्रभावित थे । जब दक्षिण अफ्रीका से गांधी भारत आए तो उनका पहला आंदोलन चंपारण से शुरू हुआ । प्रारंभ में गांधी ने देश के विभिन्न भागों का दौरा किया और राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक मुद्दों को समझने की कोशिश की । गांधीजी जब चंपारण गए तो सबसे बड़ी दिक्कत उन्हें भाषा को लेकर हुई । इस मामले में कुछ स्थानीय सार्थियों ने उनकी मदद की, लेकिन गांधीजी ने खुद बहुत जतन से हिन्दी सीखी । स्वतंत्रता आंदोलन में आने से पहले गांधीजी ने पूरे देश का भ्रमण किया और पाया कि हिन्दी ही एकमात्र ऐसी भाषा है, जो पूरे

देश को जोड़ सकती है । इसलिए उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की बात कही । आजादी के बादे जब देश का बंटवारा हुआ तो किसी विदेशी पत्रकार ने उनसे दुनिया को संदेश देने की बात कही तो गांधीजी ने जो जवाद दिया वह बहुत मार्मिक है । उन्होंने कहा कि कह दो दुनिया को कि गांधी को अंग्रेजी नहीं आती । बेशक, इसके पीछे बंटवारे को लेकिन उनका क्षोभ था, लेकिन ध्यान देने की बात है कि पूरे राष्ट्रीय आंदोलन को गांधीजी ने हिन्दी से जोड़ दिया था और यही कारण है कि अन्य भाषाभाषी नेताओं को भी हिन्दी की शरण में आना पड़ा । गांधीजी जो हिन्दी लिखते और बोलते थे, उसे वे हिन्दी नहीं, बल्कि हिंदुस्तानी कहते थे । यह उस समय की संस्कृतनिष्ठ हिन्दी से अलग थी । यह सहज-सरल हिन्दी थी, जिसे गांधीजी ने एक संपर्कभाषा के रूप में प्रयोग किया । उनका यह वाक्य बहुत प्रसिद्ध है कि "राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नित के लिए आवश्यक है" ।

खिलाफत और असहयोग आन्दोलन

कांग्रेस के अंदर और मुश्किलों के बीच अपनी लोकप्रियता बढ़ाने का मौका गांधी जी को खिलाफत आन्दोलन के जरिये मिला । इसके बाद गांधी न सिर्फ कांग्रेस बल्कि देश के एक मात्र ऐसा नेता बन गये जिसका प्रभाव विभिन्न समुदाय के लोगों पर था । गांधी जी का मानना था कि भारत में अंग्रेजी की हुक्मत भारतीयों के सहयोग से ही सम्भव हो पाई थी और अगर हम सब मिलकर अंग्रेजी के खिलाफ हर बात पर असहयोग करें तो आजादी संभव है।

इसी बीच जिलयांवाला नरसंहार ने देश को भारी आघात पहुँचाया जिससे जनता में क्रोध और हिंसा की ज्वाला भड़क उठी थी। गांधी जी ने स्वदेशी नीति का आह्वन किया जिसमें विदेशी वस्तुओं, विशेषकर अंग्रेजी वस्तुओं का बहिष्कार करना था । असहयोग आंदोलन को अपार सफलता मिली । गांधी जी के साथ अनेक लोग जेलों में बंद हुए । "भारत छोड़ों" स्वतंत्रता आन्दोलन के संघर्ष का सर्वाधिक शक्तिशाली आंदोलन बन गया जिसमें व्यापक हिंसा और गिरफ्तारी हुई । 9 अगस्त, 1942 को अंग्रेजी सरकार ने गांधी और काग्रेस कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्यों को मुम्बई में गिरफ्तार कर लिया । महात्मा गांधी से जब प्रश्न किया गया कि आधिकारिक रूप से अंग्रेजी का प्रयोग किया जा रहा है और इसे बदलने की बजाए ऐसे ही जारी रखा जाये क्योंकि लोग इस भाषा को भी भारत में समझने लगे हैं । इस सवाल पर महात्मा गांधी का कहना था कि अंग्रेजी से बेहतर होगा कि हिन्दुस्तानी को भारत की राष्ट्रीय भाषा बनाया जाए क्योंकि यह हिन्दू - मुसलमान, उत्तर - दक्षिण को जोड़ती है । महात्मा गांधी का यह भी मानना था कि हिन्दी का प्रयोग केवल बोलचाल और देश की आधिकारिक भाषा के तौर पर ही नहीं बल्कि न्यायलयों में सुनवाई के लिए भी किया जाना चाहिए । इस बारे में वे कहते थे, "कोट की सुनवाई के दौरान राष्ट्रीय भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए अगर ऐसा नहीं होता है. लोगों को राजनीतिक प्रक्रिया पूरी तरह से समझ नहीं आएगी । राष्ट्रीय और क्षेत्रीय भाषाओं को कोर्ट में जरूर आगे बढाना चाहिए । अपने भाषण की समाप्ति पर महात्मा गांधी ने कहा था, मेरा विनम्र लेकिन दृढ़ विचार है कि जब तक हम हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा का दर्जा नहीं दिला देते और दूसरी क्षेत्रीय भाषाओं को उनका जरूरी महत्व नहीं दिला देते, तब तक स्वराज्य की सारी बातें अर्थहीन रहेंगी" ।

उपसंहार

गांधीजी सिर्फ राष्ट्रीय नेता ही नहीं थे, अपने समय के बहुत अच्छे पत्रकार भी थे । हिन्दी में उन्होंने दो अखबार निकाले - नवजीवन और हरिजन सेवक । अपने ज्यादातर पत्रों का जवाब भी गांधीजी हिन्दी में ही देना पसंद करते थे । इसमें कोई शक नहीं कि हिन्दी अगर राष्ट्रभाषा बन सकी तो उसमें गांधीजी का बड़ा योगदान था । भारतीय संस्कृति और सभ्यता को उजागर कर राष्ट्रीय एकात्मता को मजबूत करने वाली हिन्दी, हमारे राष्ट्र की गौरवशाली परम्परा का प्रतीक है। कहीं अच्छा हो यदि ग्रामीण विकास में निरन्तर सेवारत विद्वान अपना चिन्तन, मनन और लेखन मूलत: हिन्दी में कर अपने कार्य और ज्ञान से करोड़ों भारतीय जनसाधारण को लाभान्वित करें।

